नारी
आंदोलन
का इतिहास

भाग १

स्त्री जीवन का संघर्ष:
प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक

नारी
आंदोलन
का इतिहास

भाग १

स्त्री जीवन का संघर्षः प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक

उन्नति

sahiyar

प्रस्तुतिः उन्नति - विकास शिक्षण संगठन एवं सहियर (स्त्री संगठन), २००९

प्रथम संस्करणः ५०० प्रतियां, २००९

इस पुस्तिका का उपयोग, जन-शिक्षण के लिए, गैर-व्यावसायिक रूप से किया जा सकता है। उपयोग करते समय कृपया लेखिका एवं प्रकाशक का उल्लेख करें तथा हमें सूचित करें।

लेखिकाः डॉ. तृप्ति शाह, सहियर (स्त्री संगठन), वड़ोदरा

हिन्दी अनुवादः रामनरेश सोनी

प्रकाशकः उन्नति - विकास शिक्षण संगठन एवं सहियर (स्त्री संगठन)

प्राप्ति स्थानः

उन्नति - विकास शिक्षण संगठन
जी-१/२००, आज़ाद सोसायटी, आंबावाड़ी
अहमदाबाद-३८० ०१५
फोनः ०७९-२६७४६१४५, २६७३३२९६
ई-मेलः sie@unnati.org

सहियर (स्त्री संगठन)
जी-३, शिवांजली फ्लैट्स, जाधव अमीश्रद्धा सोसायटी के पास
नवजीवन, आजवा रोड़, वड़ोदरा-३९० ०१९
फोनः ०२६५-२५१३४८२
ई-मेलः sahiyar@gmail.com

डिज़ाइन एवं कला निर्देशनः तरुण दीप गिरधर, अहमदाबाद

चित्रांकनः कविता अरविंद, चिड़िया उड़, बेंगालूरु

विन्यासः रमेश पटेल एवं हितेश गोलकिया

मुद्रकः बंसीधर ऑफसेट, अहमदाबाद. फोनः ०७९-२६४४१९६७

अस्वीकरणः

यह पुस्तिका मुख्य रूप से स्थानीय कार्यकर्ताओं की जेंडर, पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था, स्त्रियों के गिरते स्थान के ऐतिहासिक मूल और समतापूर्ण विकास हेतु महिला सशक्तिकरण की जरूरत से संबंधित अवधारणाओं के संदर्भ में समझ बढ़ाने के आशय से तैयार की गई है।

इस पुस्तिका में वर्णित महिला मंडल की चर्चा में भाग लेने वाले सभी पात्र काल्पनिक हैं और किसी भी जीवित अथवा ऐतिहासिक पात्र के साथ उनकी समानता संयोग मात्र है। (किसी प्रसंग में ऐतिहासिक या वर्तमान ही में घटित घटनाओं के साथ यदि उनके अनुभव जुड़े हुये लगें, तो ऐसा सिर्फ मुद्दों और अवधारणाओं को स्पष्ट करने के उद्देश्य से किया गया है।)

इस पुस्तिका का उपयोग करने वाले व्यक्ति इस साहित्य का उपयोग समुदाय से प्राप्त अपनी ताज़ातरीन जानकारी के साथ जोड़कर तथा अधिकाधिक सूचनाओं की जरूरत पड़े तो विशेषज्ञों से और संदर्भ साहित्य से प्राप्त करके उनके साथ उपयोग कर सकते हैं। न यह कोई कानूनी साहित्य है, न ही इसका व्यावसायिक उद्देश्य से उपयोग किया जाए।

प्रस्तावनाः अभिनन्दनीय प्रयास

नारी आंदोलन के इतिहास तथा वर्तमान की चुनौतियों को दर्शाने वाली इस पुस्तिका श्रृंखला का स्वागत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है। इस पुस्तिका के प्रकाशन में विकास-शिक्षण में कार्यरत प्रतिष्ठित संस्था 'उन्नति-विकास शिक्षण संगठन' और 'सहियर' का यह संयुक्त प्रयास प्रशंसनीय है। गुजरात तथा गुजरात के बाहर पीड़ित वर्गों के आंदोलन से जुड़ी सक्रिय कार्यकर्ता तृप्ति शाह को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं हैं, बल्कि एक इनसाईडर के रूप में महिला आंदोलन का आलेखन तृप्ति द्वारा हुआ है, इसका खास उल्लेख करना मुझे जरूरी लगता है।

भारत में नारी आंदोलन के इतिहास के आलेखन, महिला अध्ययन के महत्वपूर्ण अंशों के रूप में हुए हैं। इसके अलावा, नारी समूहों के विभिन्न मुद्दों पर संघर्ष तथा प्रतिक्रिया के आलेखन विविध रूप में भी उपलब्ध हैं। अध्ययनकर्ताओं ने पश्चिम के नारी आंदोलन की प्रक्रिया की तुलना भारतीय नारी आंदोलन के साथ भी की है। इसके बावजूद मैं यहां प्रस्तुत पुस्तिका श्रृंखला की विशेष उपयुक्तता का संक्षेप में वर्णन करना चाहूंगी।

समाज परिवर्तन के लिए तथा नारी समानता व स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत् स्थानीय कार्यकर्ताओं और अध्ययनकर्ताओं के लिए महिलाओं का गिरता स्थान, पितृसत्तात्मक ढांचा और मूल्य तथा इनसे मुक्ति पाने हेतु प्रयासों को समझना अत्यंत आवश्यक है। नारी आंदोलन में केवल शौर्य, उत्साह या शहादत ही पर्याप्त नहीं हैं। वह केवल किसी मुद्दे पर आधारित चुनौती ही नहीं है, बल्कि वह समग्र पितृसत्तात्मक और सामाजिक-आर्थिक ढांचे को चुनौती देता है। इसके अलावा नारी का दमन-शोषण-अवहेलना किसी एक विशिष्ट घटना या विशिष्ट ढांचे द्वारा नहीं होता, बल्कि यह समाज के मूल में व्याप्त है और सर्वव्यापक है। अतः इस मूल को समझना और चुनौती देना आवश्यक है।

वर्तमान में स्वास्थ्य, पर्यावरण सुरक्षा, मानवाधिकार रक्षा, दलित, पीड़ित वर्गों की समस्याओं आदि जैसे विविध मुद्दों पर स्थापित वर्ग के विरुद्ध अनेक गैर-सरकारी संस्थाएं प्रयासरत हैं। प्रत्येक स्तर पर संघर्ष और चुनौती अनिवार्य होती है। अपने कार्य में जेंडर आधारित न्याय लाने हेतु यह आवश्यक है कि हर स्तर के कार्यकर्ता को नारी आंदोलन के विविध स्वरूपों, रणनीतियों तथा उससे जुड़ी सही-गलत की जानकारी व समझ हो। मेरा मानना है कि यह पुस्तक श्रृंखला उनके लिए मार्गदर्शक साबित होगी।

किसी भी मुद्दे या घटना के अनुरूप रणनीति तय करने के लिए तात्कालिक समझ आवश्यक है, परंतु स्थानीय कार्यकर्ता जब समाज में बुनियादी परिवर्तन लाने की कोशिश कर रहे हों, तब विभिन्न बारीकियों को समझना उनके लिए अत्यंत आवश्यक है। इसके अलावा, ये बारीकियां किसी भी प्रतिक्रिया के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ी हताशा-निराशा-पीछे हटने की प्रवृत्ति को समझने में उपयोगी सिद्ध होती हैं।

किसी भी आंदोलन के आलेखन में पूर्वभूमिका का महत्व होता है। इसके अलावा कुछ मूलभूत विचारों को समझना जरूरी होता है। इतना ही नहीं, इन अवधारणाओं की समाज के ढांचे और मूल्य व्यवस्था के साथ जुड़ाव संबंधी स्पष्टता आंदोलन के विविध आविर्भावों के बारे में सुझाव दे सकती है। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था के भूतकाल की समझ वर्तमान को पहचानने के लिए आवश्यक है। भारतीय समाज का इतिहास सदियों पुराना है। भारतीय समाज समरूप नहीं बल्कि विविधतापूर्ण है। यह जाति, वर्ग, भाषा, लिंग जैसी विविधताओं से भरा हुआ है। वैश्विक स्तर के संदर्भ में भारतीय आंदोलन की समझ घटनाओं की समानता और विविधता का परिचय देती है। खासतौर पर यह कार्यकर्ताओं के लिए जरूरी, व्यापक दृष्टि दे सकता है। संक्षेप में, मेरी धारणा है कि यह पुस्तक श्रृंखला नारी आंदोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, अंतरराष्ट्रीय फलक, वर्तमान आंदोलन के क्षेत्र में मुद्दों और चुनौतियों को समझने के लिए स्थानीय कार्यकर्ताओं तथा अध्ययनकर्ताओं

हेतु उपयोगी होगी। इसके अलावा इस पुस्तक श्रृंखला में सरल भाषा, लोकगीतों, रेखाचित्रों आदि का प्रयोग हुआ है, जो उपेक्षित बहनों को आंदोलन की आवश्यकताएं समझाने में स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए सहायक होंगे।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान तथा कम्युनिस्ट आंदोलन के दौरान कार्यकर्ताओं को तैयार करने के लिए स्टडी सर्किल (अध्ययन समूहों) का महत्त्व समझा गया था। इन समूहों द्वारा कार्यकर्ताओं में आंदोलन के विविध चरणों और मुद्दों पर व्यवस्थित सघन-गहन विश्लेषण करने का माहौल बना। इसे पुनः जीवित करने की आवश्यकता लगती है। इस संदर्भ में इस पुस्तिका श्रृंखला जैसे प्रयोग सहायक होंगे।

पुनः 'उन्नति - विकास शिक्षण संगठन' तथा तृप्ति शाह एवं 'सहियर' का इस अभिनव के लिए अभिनंदन!

नीरा देसाई
जनवरी-२००९

डॉ. नीरा देसाई भारत में नारी अध्ययन तथा अनुसंधान की नींव डालने वालों में से एक हैं। जब महिलाओं की समस्याओं पर शायद ही कोई अनुसंधान होता था, तब १९५७ में उन्होंने 'भारतीय समाज में महिला जीवन' नामक शोध पुस्तक लिखी थी। वे भारत के प्रथम नारी अध्ययन केन्द्र, एस.एन.डी.टी. युनिवर्सिटी, मुंबई की संस्थापक-निदेशक थीं। इन्होंने महिलाओं की विविध समस्याओं तथा नारी आंदोलन पर गुजराती और अंग्रेजी में अनेक महत्वपूर्ण अनुसंधान और लेख प्रकाशित किए हैं।

डॉ. नीरा देसाई की विशेषता यह है कि वे मात्र अध्येता ही नहीं, बल्कि शुरुआत से ही भारत के नारी आंदोलन से जुड़ी सक्रिय समर्थक भी रही हैं।

अनुक्रम

आभार 8

भूमिका और परिचय 9

पुस्तिका श्रृंखला का उपयोग 16

स्त्री की जात और पुरुष की जात? **20**

सामाजिक भेदभाव को स्त्रियों की चुनौतीः प्राचीन काल **30**

पितृसत्ता और जाति प्रथाः मनु स्मृति काल **40**

ब्राह्मणवादी वर्चस्व के सामने बौद्ध और भक्ति आंदोलन **48**

स्त्री भक्तों के व्यक्तिगत संघर्ष की सीमाएं **60**

परिशिष्टः

पितृसत्ता या पुरुषों के आधिपत्य वाली समाज व्यवस्था 70

संदर्भ साहित्य की सूची 76

आभार

हम 'उन्नति' के संस्थापक - निदेशक श्री बिनॉय आचार्य के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं कि उन्होंने नारी आंदोलन के इतिहास की पुस्तिकाओं को स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए तैयार करने हेतु सर्वप्रथम सुझाव दिया और उसके लिए निरंतर प्रोत्साहित किया।

पुस्तिकाओं को तैयार करने में फोटोकॉपी करने से लेकर डाक भेजना, साहित्य ढूंढ़ना, चाय पानी की व्यवस्था आदि कामों में उन्नति एवं सहियर के साथियों का भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ, जिसमें उन्नति के कमलेश भाई राठोड़, लक्ष्मणसिंह बी. राठोड़, लक्ष्मणसिंह एस. राठोड़, भवानसिंह राठोड़, सरदारसिंह राठोड़, करणसिंह राठोड़, रेनिसन एफ. रिबेलो एवं बीनू जॉर्ज तथा सहियर के कमल ठक्कर शामिल हैं। साथ ही लेखा टीम में प्रेयस मेवाड़ा, धर्मिष्ठा हलपति एवं बिपिन त्रिपाठी ने हिसाब-किताब एवं वित्त संबंधी पहलुओं का ध्यान रखा।

उन्नति के रमेश पटेल, हितेश गोलकिया एवं सहियर की रेशमा वोरा ने पुस्तिका की अनेक प्रतियों को बारंबार सुधारने एवं टाईप करने में अपना पूर्ण सहयोग दिया। हिन्दी अनुवाद का मूल लेखों के साथ मिलान करके उसमें संशोधन हेतु सुझाव देने के लिए उन्नति की शम्पा बटब्याल, गीता शर्मा एवं स्वप्नी शाह तथा सहियर की रेशमा वोरा, कमल ठाकर, सुनंदा तायड़े, रीना जगताप, हेतल परमार, रीटा चोकसी, सूर्यकांता शाह, दीपाली घेलाणी, प्रिया संकपाल, प्रीतल ठाकर, राधा बाबी एवं साजेदा शेख के प्रति हम आभारी हैं।

जब से यह पुस्तिका वैचारिक अवस्था में थी तब से लेकर इसके पहले प्रारूप तैयार होने तक हमें नैतिक समर्थन एवं आलोचनात्मक सुझाव, मार्गदर्शक साहित्य एवं संदर्भ साहित्य प्रदान करने के लिए नारी अध्ययन एवं आंदोलन के अग्रणी साथी नीराबहन देसाई, विभूतिबहन पटेल, सोनलबहन शुक्ल, उषाबहन ठक्कर, सोफिया खान, रोहित प्रजापति, फादर जिम्मी डाभी, हसीना खान तथा संध्या गोखले ने सहयोग दिया। हम इन सबके प्रति हृदय से अभारी हैं। इन सभी के योगदान से ही इस स्तर की श्रृंखला का सृजन करना संभव हो पाया है।

भूमिका और परिचय

इस श्रृंखला का सृजन क्यों?

मानवता और समानता पर आधारित न्यायी समाज के सृजन की जद्दोज़हद में यदि आधी मानव जाति का दृष्टिकोण शामिल न हो, तो नई दुनिया का, बेहतर दुनिया का चित्र अधूरा ही रहेगा। पिछले दशक से इस बात को अधिकाधिक स्वीकृति मिलती गई है और इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में विकास तथा समाज परिवर्तन के लिए काम करने वाली संस्थाओं, संगठनों और लोक आंदोलनों के कार्यकर्ताओं में महिलाओं की भागीदारी, महिला विकास, जेंडर, महिला सशक्तिकरण जैसी अवधारणाएं प्रचलित हुई हैं।

सवाल यह है कि इस चरण में ही महिलाओं के मुद्दे क्यों सामने आए? क्या ये नए सवाल हैं या उनका कोई इतिहास भी है? और यदि इतिहास है, तो क्या उसे जानने और समझने की ज़रूरत नहीं है?

इतिहास शब्द सुनकर सामान्यतः राजा-महाराजाओं के साम्राज्य, अधिकारियों, योद्धाओं, नेताओं के पराक्रम के कालानुक्रम का चित्र आंखों के सामने आता है, क्योंकि हमारे स्कूलों में ऐसा ही इतिहास हमें पढ़ाया जाता है। इसीलिए इतिहास जानने की कोई जिज्ञासा सामान्य आदमी के मन में नहीं रहती, लेकिन इतिहास लेखन का एक महत्वपूर्ण प्रकार है सामाजिक इतिहास। इसमें राजा-महाराजाओं की नहीं, बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों के जीवन-संघर्ष, कार्य और समाज को बदलने के प्रयासों आदि की बात भी होती है। हमारे आज की बुनियाद हमारे इतिहास में निहित है। यदि इतिहास को समझेंगे, तभी आने वाले कल के सृजन के लिए प्रभावी काम कर सकेंगे। हालांकि ऐसा सामाजिक इतिहास भी यदि मात्र पुरुष की कहानी (His Story) बन कर रह जाए और इसमें से महिला की कहानी (Her Story) अदृश्य रहे, तो इतिहास अधूरा ही होगा। अतः विकास या समाज परिवर्तन के कार्य से जुड़े तमाम कार्यकर्ताओं के लिए नारी आंदोलन का इतिहास जानना व समझना ज़रूरी है।

नारी आंदोलन का इतिहास मात्र स्त्रियों का इतिहास नहीं है, क्योंकि नारी आंदोलन समाज परिवर्तन के आंदोलन के साथ गहनता से जुड़ा हुआ है। जब-जब समाज में कोई बड़ी घटना घटती है, उथल-पुथल होती है, तब उसमें महिलाएं अहम भूमिका निभाती हैं।

विश्व की तमाम महान क्रांतियों और परिवर्तनों में स्त्रियों की भूमिका क्या थी, उनका क्या योगदान था और उसके परिणामस्वरूप वे क्या प्राप्त कर सकीं तथा क्या न पा सकीं, इन सबका बोधपाठ हमारी आगामी रणनीति तय करने में उपयोगी होता है।

वर्तमान की चुनौतियां और इतिहास

६० के दशक में पश्चिम के देशों में शुरू हुए नारीवादी आंदोलन के साथ-साथ नारी अध्ययन का भी विकास हुआ और महिलाओं की परिस्थिति समझने के लिए दृष्टिकोणों का भी विकास हुआ। पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था के ताने-बाने को उधेड़ने की शुरूआत हुई। कुदरती लिंग (Sex) के खिलाफ स्त्री-पुरुष समाज प्रेरित व्याख्या, 'जेंडर' की संकल्पना विकसित हुई और इसका प्रभाव यूनाइटेड नेशन्स सहित तमाम अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं पर पड़ा। यह संभव ही नहीं था कि उनके विकास कार्यक्रमों व नीतियों पर विश्व भर में फैल रहे नारी आंदोलन का प्रभाव न पड़े।

मैक्सिको, नैरोबी और उसके बाद की बीजिंग में हुई यू.एन.ओ. की अंतरराष्ट्रीय महिला परिषदों के बाद आज मुख्य धारा में जेंडर की सहभागिता - 'जेंडर मेनस्ट्रीमिंग' की बातें दुनिया भर की सरकारें और गैर-सरकारी संस्थाएं स्वीकारने लगी हैं। इसकी शुरूआत १९७० में ईस्टर बोसरप की डब्ल्यू आई डी (विकास में स्त्रियां) के नाम से प्रचलित दृष्टिकोण से हुई थी। उसने स्त्रियों की आर्थिक सहभागिता को मुद्दा बना कर विकास के कार्यक्रमों में स्त्री जिस तरह बाहर रह जाती है, उसकी बात की और स्त्री को विकास की प्रक्रिया में जोड़ने की पैरवी शुरू की। इसके बाद डब्ल्यू ए डी (विकास और स्त्रियां) तथा जी ए डी (जेंडर और विकास) के रूप में प्रचलित दृष्टिकोणों द्वारा विकास की कथित मुख्य धारा और महिलाओं के स्थान (पोज़िशन) पर होने वाले उसके प्रभाव तथा समाज के तमाम ढांचों का स्त्री-पुरुष के बीच के सत्ता के संबंधों में

स्त्रियों के गिरते स्थान का विश्लेषण किया गया। उसमें मूलभूत परिवर्तन की ज़रूरत के बारे में चर्चा की शुरुआत हुई। इसके फलस्वरूप आज विकास तथा समाज परिवर्तन के तमाम क्षेत्रों में स्त्रियों की स्थिति (कंडीशन) और स्त्रियों के स्थान (पोजिशन) सम्बंधी समस्याओं को शामिल किया जाने लगा है।

भारत की बात करें, तो ७० के दशक में कुछ छोटे-छोटे स्वायत्त समूहों ने बलात्कार, दहेज, महिलाओं पर हिंसा, पारिवारिक कानून जैसे मुद्दों से लेकर समाज के विशाल समूह को छूने वाले तमाम मुद्दों में सहभागिता दर्ज कराई है। तब से लेकर इन वर्षों के दौरान नारी आंदोलन की व्यापकता और प्रभाव बढ़ा है। इसमें विभिन्न वर्ग, जाति, धर्म, यौनिक अभिरुचि, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और भाषा की पृष्ठभूमि वाले कार्यकर्ताओं तथा विविध प्रकार के महिला समूहों, बचत समूहों, लोक संगठनों ने भी सहभागिता दिखाई है। भारत तथा दुनिया के नारी आंदोलनों के सतत प्रयासों के फलस्वरूप ऐसा माहौल बना है, जिसमें किसी भी राजनीतिक दल, सरकार, फंडिंग एजेंसियों, विकास के कार्य करने वाले गैर-सरकारी संगठनों या जन आंदोलनों के लिए महिलाओं के मुद्दों की अवहेलना करना असंभव हो गया है। इसे विश्व और भारत के नारी आंदोलनों की सफलता कहा जा सकता है।

दूसरी तरफ समाज के पुरुष प्रधान-पितृसत्तात्मक ढांचे के साथ वैश्वीकरण, उदारीकरण, धर्मांधता, कौमवाद तथा जातिवाद जैसी समस्याओं के माहौल इतने अधिक मजबूत ढंग से गुंथते जा रहे हैं कि जिससे महिलाओं की समस्याओं की जटिलता भी बढ़ती जा रही है।

एक तरफ पुरुषों की जागीर माने जाने वाले व्यवसायों और शैक्षणिक संस्थानों में सफलता के सोपान हासिल कर रही स्त्रियों के सक्षम व्यक्तित्व की तस्वीरें देखने को मिलती हैं, तो दूसरी तरफ बेटियों की घटती संख्या, दहेज व सती जैसी समस्याएं नए रूप में उभर रही हैं, जिनसे महिलाओं के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा है।

समलैंगिक संबंधों या अलग प्रकार के यौन संबंधों वाले लोगों, वेश्या व्यवसाय से जुड़ी स्त्रियों के संगठनों द्वारा इन प्रतिबंधित माने जाने वाले विषयों की सार्वजनिक चर्चा तथा विरोध प्रदर्शनों को स्वीकृति मिलती

दिखती है, तो साथ ही साथ सदियों पुरानी पारिवारिक हिंसा के प्रकार और प्रमाण दोनों बढ़ रहे हैं।

विकास नीति के फलस्वरूप समाज के सीमांत समूह और महिलाएं अधिकाधिक संख्या में हाशिये पर धकेले जा रहे हैं। इसके सामने आदिवासी, दलित, समुद्र तट के समुदाय, अल्पसंख्यक आदि जीवन निर्वाह, प्राकृतिक संसाधनों पर अंकुश, हिंसा तथा बुनियादी मुद्दों को लेकर सतत संघर्ष कर रहे हैं। जैसे-जैसे समाज के सीमांत समूहों का संघर्ष आगे बढ़ रहा है, वैसे-वैसे उसमें महिलाओं की सहभागिता ही नहीं, बल्कि नेतृत्व भी आगे बढ़ता दिखाई दे रहा है। अपने कार्यक्षेत्र में सफल संघर्ष के अनेक उदाहरणों की प्रेरणादायी बातें सामने आती हैं, तो कभी-कभी वैश्वीकरण, धर्मांधता, कौमवाद, जातिवाद के तानेबाने में बनी पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष में दो कदम आगे तथा चार कदम पीछे जैसी स्थिति का अनुभव होता है। इसके प्रतिबिंब के रूप में प्रशिक्षण कार्यक्रमों, समन्वय बैठकों तथा स्थानीय कार्यकर्ताओं के साथ संवाद में, 'अब आगे क्यों?' या 'आगे किस तरह बढ़ा जाए?' जैसे सवाल बार-बार उठते हैं।

इस चरण में अनेक कार्यकर्ताओं का अनुभव दर्शाता है कि उभर रहे कुछ सवालों की जटिलता को समझने की निशानी हमारे संघर्ष के इतिहास से मिल सकती है, तो साथ ही साथ प्रेरणा देने वाले पात्रों और घटनाओं की भी कमी नहीं है। सफलता दूर की कौड़ी लगती हो, तब निराशा से बचने का रास्ता और समस्याओं से निपटने का आत्मविश्वास इतिहास के अध्ययन से ही जन्म लेता है। इसके अलावा समाज की दशा और समाज परिवर्तन की दिशा समझने की सैद्धांतिक स्पष्टता भी समझ में आती है। 'उन्नति-विकास शिक्षण संगठन' तथा 'सहियर' (स्त्री संगठन) मिल कर इस पुस्तिका श्रृंखला का प्रकाशन इस आशय से कर रहे हैं कि स्थानीय कार्यकर्ताओं को सरल भाषा में सामग्री उपलब्ध हो।

विचार का उद्‌भव और प्रक्रिया

इस संयुक्त प्रकाशन के विचार का उद्‌भव २००४ में हुआ। जेंडर सेंसिटाइज़ेशन हेतु प्रशिक्षणों में नारी आंदोलन के इतिहास के विषय पर शायद ही कभी चर्चा होती है। इन्हीं परिस्थितियों के बीच २००४ में अहमदाबाद में आयोजित जेंडर मेनस्ट्रीमिंग के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम में उन्नति के संस्थापक-निदेशक श्री बिनॉय आचार्य के आग्रह से एक सत्र

नारी आंदोलन के बारे में रखा गया था। 'सहियर' की सुश्री तृप्ति शाह ने इसका संचालन किया। तब, प्रशिक्षणार्थियों के लिए इस विषय पर उपयोगी साहित्य की ज़रूरत महसूस हुई। फरवरी, २००७ में गुजरात के विभिन्न संगठनों के स्थानीय कार्यकर्ताओं के बीच गुजरात के नारी आंदोलन के क्षेत्रीय अनुभवों, नारीवादी विचारधारा तथा आगामी रणनीतियों के बारे में आयोजित परिसंवाद के दौरान भी ऐसे साहित्य की ज़रूरत महसूस की गई।

नारी आंदोलन का इतिहास दर्शाने वाली अधिकांश महत्वपूर्ण पुस्तकें अंग्रेजी भाषा में लिखी गई हैं और स्थानीय भाषाओं में भी इससे पहले कुछ महत्त्वपूर्ण प्रकाशन हुए हैं। परंतु, ऐसे साहित्य की कमी खलती थी जिसे स्थानीय कार्यकर्ता समझ सकें तथा दूसरों को समझाने में उपयोग कर सकें। परंतु अन्य कार्यों के दबाव के कारण यह काम शुरू नहीं किया जा सका।

जून, २००७ में दुबारा 'उन्नति' की ओर से पहल की गई और दीपा सोनपाल, गीता शर्मा तथा तृप्ति शाह ने इस दिशा में तत्काल ठोस कदम उठाने पर चर्चा की। शुरुआत में ७० से ८० पृष्ठों की एक सचित्र पुस्तिका तैयार करने का विचार था। परंतु जैसे-जैसे पुस्तिका में शामिल किए जाने वाले विषयों पर सोचा गया व अन्य मित्रों, विषय-विशेषज्ञों के साथ चर्चा हुई, तब काल और स्थल के विस्तार, मुद्दों, विवरणों, विश्लेषण आदि तमाम बातों को जोड़ना ज़रूरी लगा। इसे एक-दो माह में पूरा करने की अपेक्षा थी, लेकिन तृप्ति शाह की अस्वस्थता और रोजमर्रा के कार्यों के बीच एक वर्ष से अधिक समय में यह पुस्तिका टुकड़ों में लिखी गई। इस बीच 'उन्नति' के तमाम मित्रों के धैर्य की परीक्षा हुई, परंतु सभी के धैर्यपूर्ण आग्रह और सतत सहयोग के कारण अंततः हम यह काम पूरा कर सके हैं। आज यह छोटी सी पुस्तिका बढ़ते-बढ़ते चार अलग-अलग पुस्तिकाओं की श्रृंखला का रूप ले चुकी है।

विषयवस्तु और प्रस्तुति

प्रथम भाग, **'स्त्री जीवन संघर्षः प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक'** जेंडर में पितृसत्तात्मक जैसी नारीवादी अवधारणाओं के अलावा प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक के समय का समावेश किया गया है। इसमें भारत में पितृसत्तात्मक ढांचे के निर्माण की बात की गई है। जाति प्रथा

तथा पितृसत्ता के तानेबाने द्वारा स्थापित ब्राह्मणवादी-पितृसत्ता की हल्की सी झलक दी गई है। हिन्दू धर्म के ब्राह्मणवाद के खिलाफ चुनौती के रूप में शुरू हुए बौद्ध धर्म तथा भक्ति आंदोलन की बात एवं इसमें महिलाओं की भूमिका का उल्लेख किया गया है। इसी दौरान भारत में प्रचलित हो रहे इस्लाम का उल्लेख किया है। इस्लाम से पहले अरबस्तान में प्रचलित धर्म की तुलना में इस्लाम में मौजूद उदारवादी पहलू आज व्यवहार में दिखाई नहीं देते। यह बताया गया है कि पितृसत्ता के खिलाफ ये सभी प्रयत्न अपने स्थान, काल और उस समय की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थिति से प्रेरित थे और इस वजह से सीमित थे।

दूसरे भाग, **'स्त्री समानता और मताधिकारः विश्व में नारी आंदोलन'** में १९वीं सदी में, स्त्री समानता तथा मताधिकार के लिए विश्व में हुए संघर्ष की बात है। तीसरे भाग **'सामाजिक सुधार तथा स्वतंत्रता आंदोलन में स्त्रियां'** में इस दौरान भारत में सामाजिक सुधार और उसके बाद स्वतंत्रता आंदोलन के काल का समावेश किया गया है। चौथे व अंतिम भाग **'नारी मुक्ति आंदोलनः समस्याएं और चुनौतियां'** में समकालीन नारी आंदोलन की प्रस्तावना, उसके शुरुआत के समय और हाल की समस्याओं और चुनौतियों को शामिल करने की कोशिश की गई है।

यहां यह स्पष्ट करना ज़रूरी है कि प्राचीन काल से आज तक के समग्र इतिहास को जांचने का हमारा आशय नहीं है। जिस उद्देश्य से यह श्रृंखला तैयार की गई है उसके लिए ऐसा करना ज़रूरी भी नहीं है। इस श्रृंखला का उद्देश्य ऊपर दर्शाए विस्तृत समय के दौरान, भारत और विश्व में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के बदलते स्वरूप के खिलाफ विविध चरणों में महिलाओं द्वारा किए गए विरोध तथा संघर्ष के विचार को स्थानीय कार्यकर्ताओं तक पहुंचाना है। इस आशय से श्रृंखला के विभिन्न भागों में प्रस्तुति की पद्धति और विवरणों की गहराई में भी थोड़ी विविधता है। जैसे, श्रृंखला की प्रथम पुस्तिका में भाषा तथा प्रस्तुति यथासंभव सरल रखने की कोशिश की गई है। दूसरे भाग में विश्व के नारी आंदोलन की बात करते समय उस काल में यूरोप की आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के बारे में विवरण तुलनात्मक रूप से अधिक गहराई से दिया गया है। आज हम जिस लोकतंत्र और व्यापक मताधिकार को सहज रूप से पूंजीवादी समाज की देन मानते हैं, उसे पाने के लिए जिस तरह सीमांत समूहों और खासकर महिलाओं को पूंजीवाद के शुरुआती चरण में संघर्ष

करने पड़े तथा बलिदान देने पड़े, उन्हें समझने के लिए तत्कालीन परिस्थितियों को जानना बहुत ज़रूरी है। भारत के पाठक इससे अपरिचित होंगे, ऐसा सोचकर ये विवरण अधिक विस्तारपूर्वक दिये गये हैं जबकि भारत के इतिहास के प्राथमिक विवरण से पाठक परिचित होंगे, ऐसा मान कर उसमें अधिक ज़ोर महिलाओं की भूमिका पर दिया गया है।

ऊपर के तीनों भागों में सम्बद्ध काल के संघर्ष और समस्याओं को कुछ महिलाओं के प्रेरणादायी जीवन गाथा द्वारा समझाने की पद्धति अपनाई गई है। चौथे भाग में १९७० के बाद हुए आंदोलन की बात करते समय संबंधित मुद्दों के इर्दगिर्द चर्चा की गई है। प्रत्येक मुद्दे पर वर्तमान नारीवादी समझ, उसके खिलाफ हुए विरोध की महत्वपूर्ण घटनाओं और उनका विश्लेषण करने की कोशिश की गई है ताकि, पाठक अपने संगठन या कार्यक्षेत्र में होने वाली घटनाओं को इन मुद्दों के साथ जोड़ते हुए अपनी कार्यनीति में शामिल कर सकें।

सीमाएं और अपेक्षा

इस श्रृंखला में नारी आंदोलन के तमाम महत्त्वपूर्ण मुद्दों और घटनाओं को शामिल करने की कोशिश की गई है। इसके बावजूद यह संभव है कि कुछ मुद्दे छूट गए हों, किसी कारणवश उन्हें शामिल न किया गया हो या उन्हें पर्याप्त न्याय न दिया जा सका हो। प्रत्येक पुस्तिका में स्त्री-पुरुष समानता के अलावा प्रभुत्वशाली वर्ग, जाति और धर्म से ऊपर उठ कर तमाम सीमांत समूहों के दृष्टिकोण और उनके अनुभवों के उदाहरण प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है। इस सम्बंध में लेखों के बारे में अन्य विशेषज्ञों का सहयोग तथा अभिप्राय भी लिया गया है, परंतु फिर भी सीमांत समूहों के अनुभव के बारे में हमारी समझ तथा सूचना की सीमा के कारण कोई त्रुटि रह गई हो, तो उस ओर ध्यान दिलाने का हमारा आग्रह है। पुस्तिका में शामिल मुद्दों, भाषा, प्रस्तुति और समाविष्ट नहीं किए गए मुद्दों के बारे में भी आपके सुझाव और प्रतिभाव आमंत्रित हैं।

दीपा सोनपाल
उन्नति - विकास शिक्षण संगठन

तृप्ति शाह
सहियर (स्त्री संगठन)

पुस्तिका श्रृंखला का उपयोग

यह पुस्तिका श्रृंखला महिलाओं तथा विकास के मुद्दों पर काम करने वाले स्थानीय कार्यकर्ताओं की जरूरतों को ध्यान में रख कर तैयार की गई है। स्थानीय कार्यकर्ताओं के लिए, नारी आंदोलन पर अपनी समझ विकसित करने के अलावा इस समझ को व्यापक रूप से समुदाय तक ले जाने के लिए सहायक साहित्य की जरूरत पड़ती है। इन दोनों जरूरतों को ध्यान में रख कर यथासंभव सरल भाषा में ये पुस्तिकाएं तैयार की गई हैं। पुस्तिकाओं के लेख के अलावा कुछ मुद्दों पर अतिरिक्त पठन और समाविष्ट मुद्दों पर अधिक जानकारी देने वाली पुस्तकों की सूची का भी समावेश किया गया है।

इस पुस्तिका को इस तरह तैयार किया गया है कि पुस्तिकाओं को पढ़ने के बाद कार्यकर्ता अपने कार्यक्षेत्र के लोक-समुदाय में इस विषय पर चर्चा कर सकें । नारी आंदोलन से जुड़ी घटनाओं को महिला समूह की बैठकों में होने वाली चर्चा के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इसे इस तरह से विभाजित किया गया है कि इसके हर भाग को बैठक में एक से डेढ़ घंटे में पढ़ा जा सके। मुद्दे के अनुरूप गीत, काव्य आदि को शामिल किया गया है ताकि इसे पढ़ना व समझना रोचक हो।

कार्यकर्ताओं की व्यापक समझ बने इसके लिए श्रृंखला की चारों पुस्तिकाओं को सम्पूर्ण रूप से पढ़ना जरूरी है। कार्यकर्ता स्थानीय समूहों की परिस्थिति के अनुरूप आंदोलन की घटनाओं का चयन करते हुए उन्हें प्रस्तुत करे। हालांकि, इस श्रृंखला की प्रथम पुस्तिका में बुनियादी विचार प्रस्तुत किये गए हैं। अतः इसे प्रत्येक समूह के लिए सम्पूर्ण रूप से पढ़ा या प्रस्तुत किया जा सकता है। श्रृंखला की अन्य पुस्तिकाओं का उपयोग, कार्यकर्ता स्थानीय समूह के स्वरूप व जरूरत के अनुसार कर सकते हैं।

हर प्रस्तुति के बाद समूह के सदस्यों के साथ चर्चा करना आवश्यक है। पुस्तिका में दिए गए उदाहरणों के अलावा, स्थानीय स्तर पर अधिक प्रचलित उदाहरण या गीतों का प्रयोग किया जा सकता है। चर्चा से निकल कर आए महत्वपूर्ण मुद्दों, उदाहरणों, गीतों आदि को प्रकाशक को भेजने का आग्रह है, जिससे भविष्य में उन्हें शामिल किया जा सके।

समूह में पुस्तिका पठन की प्रभावी प्रस्तुति हेतु कार्यकर्ताओं के लिए सुझावः

पुस्तिका में सात मुख्य पात्र हैं। प्रत्येक पात्र के चारित्रिक गुणों को समझकर उसके अनुरूप संवाद बोल सके इसलिए पात्रों के संक्षिप्त परिचय नीचे दिये जा रहे हैः-

एकताः महिला समूह की अग्रणी कार्यकर्ती है। शिक्षा, पठन और संघर्षों के अनुभव द्वारा महिला मुद्दों पर गहरी समझ है। महिला समूह की समझ बढ़ाने की भूमिका निभा रही है।

शकरीः ४०-४५ वर्ष की सक्षम महिला है। हिंसा के कारण पति से तलाक लेकर दो संतानों को अपने बलबूते पर लालन-पालन कर रही है। अधिक पढ़ी-लिखी नहीं है परन्तु पितृसत्ता और नाती प्रथा का सामना करने के अपने अनुभवों से समाज व्यवस्था के बारे में उसकी समझ बनी है। अपनी हिम्मत और सूझबूझ से सवाल कर सकती है।

कमलाः २०-२२ वर्ष की कॉलेज में पढ़ाई करने वाली युवती है। वह अपने माता-पिता, दादा-दादी के साथ रहती है। भेदभाव व अन्याय वह सहन नही कर पाती। नई बातें जानने व स्वीकारने को उत्सुक है।

रेशमाः कमला की सहेली और समवयस्क है। उसके साथ ही पढ़ती है। सरल और उत्साही है।

आशाः ३०-३५ वर्ष की नौकरीपेशा शिक्षित महिला है। वैवाहिक जीवन में पति के संदेह और मानसिक त्रास से जूझ रही है।

नीरु: ४०-५० वर्ष की प्रौढ़ महिला है। गृहणी है। परंपरागत वातावरण में पली-बढ़ी है। समाज में प्रचलित रीति-रिवाज, परंपराओं पर विश्वास रखने के साथ-साथ नई बातें भी सुनने को तैयार है।

फरजाना: ३०-३५ वर्ष की महिला है। गृहणी है। परम्परागत वातावरण में पली-बढ़ी है। लेकिन नई बात समझने को तैयार है।

- यदि प्रत्येक पात्र के संवाद अलग-अलग कार्यकर्ता प्रस्तुत करें, तो बहुत अच्छा होगा। लेकिन यह संभव न हो, तो एक या उससे अधिक कार्यकर्ता प्रस्तुति कर सकते हैं।
- यदि समूह में प्रभावी रूप से पढ़ने वाले सदस्य हों, तो कुछ पात्रों के संवाद समूह के सदस्यों को पढ़ने को कहा जा सकता है।
- जिस भाग को पढ़ना हो, उसे कार्यकर्ता पहले से पढ़ कर समझ लें।
- अधिकांशतः सरल भाषा और शब्दों का प्रयोग किया गया है, परंतु इसके बावजूद कोई शब्द नया या कठिन लगे तो उसका अर्थ और स्पष्ट उच्चारण पहले से मालूम कर लें।
- जहां जरूरी लगे, वहां पुस्तिका में दिए उदाहरणों-गीतों के बदले स्थानीय स्तर पर अधिक प्रभावी उदाहरण और गीत उपलब्ध हों तो उन्हें ढूंढ कर बैठक से पहले तैयार रखें।

स्त्री की जात और पुरुष की जात?

(कमला जल्दी-जल्दी तैयार होकर बाहर निकल ही रही थी,
तभी पीछे से इच्छा मां ने आवाज दी)

इच्छा मां: कहां चली..... अभी से? आज तेरी छुट्टी है दो घड़ी घर के काम में हाथ बंटा ना!

कमला: अरे मां..... काम तो मैं वापिस आकर कर दूंगी। अभी तो महिला मंडल की मीटिंग में जा रही हूं।

इच्छा मां: भाड़ में गई तेरी मीटिंग..... आजकल की लड़कियां दो किताबें पढ़ना क्या सीख जाती हैं, बस उनके निकम्मे धंधे शुरू हो जाते हैं। स्त्री की जात को ये शोभा नहीं देता। पुराने जमाने में तो ऐसा कुछ भी नहीं था।

कमला: लेकिन मां, यह तो नया जमाना है। पुराने जमाने की बीती रात..... नये जमाने की नयी बात....

(और इस तरह गीत गाती-गाती इच्छा मां को कुछ और बोलने का मौका दिये बिना ही वह घर से बाहर निकल गई, पर पूरे रास्ते उसके मन में 'स्त्री की जात' शब्द हथौड़े की तरह पीटता रहा। सोचती-सोचती वह महिला मंडल के ऑफिस जा पहुंची। उसका उतरा हुआ मुंह देखकर उसकी सहेली रेशमा समझ गई कि कुछ हुआ है।)

रेशमा: अरे क्या बात है? किसी से झगड़कर आई हो क्या?

कमला: नहीं। किसी के साथ नहीं। अपनी 'जात' के साथ झगड़ रही हूं कि मैं स्त्री के रूप में क्यों जन्मी? पुरुष के रूप में जन्मी होती तो कितने रौब से घूमती और अपना मनचाहा करती!

रेशमा: हां री! मुझे भी कई बार ऐसा ही ख्याल आता है।

नीरु: आग लगे इस स्त्री के जन्म को।

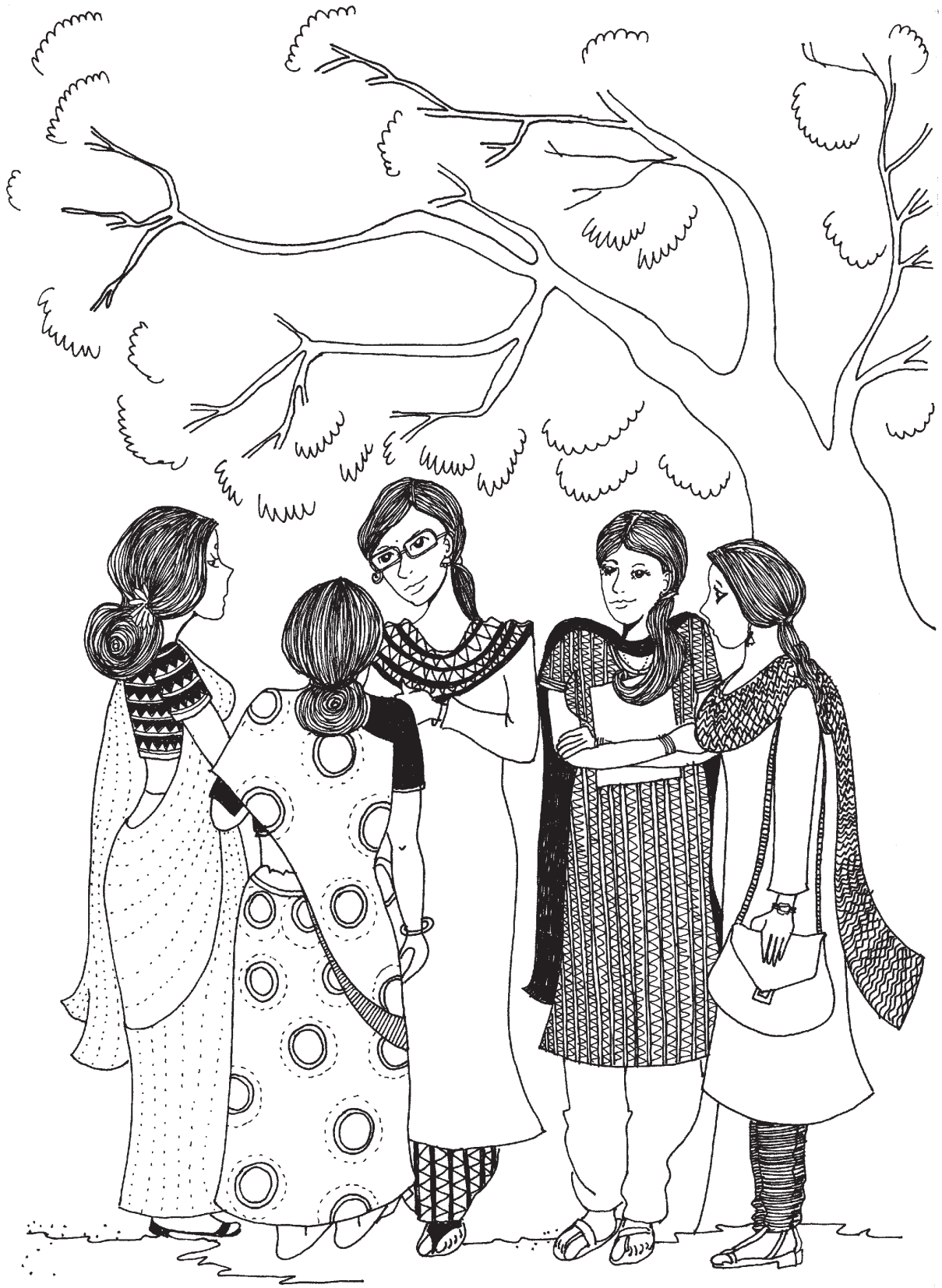

एकता: भई, मुझे तो ऐसा नहीं लगता कि स्त्री का जन्म निरर्थक है! ..... और कमला, तुझे 'जात' के साथ झगड़ने की कोई जरूरत नहीं। क्योंकि स्त्री भी लगभग वही सारे काम कर सकती है जो पुरुष करता है।

फरजाना: नहीं, मेरी बहन! स्त्री, स्त्री है और पुरुष, पुरुष। औरत कभी भी मरद की बराबरी नहीं कर सकती।

आशा: हां हां, अगर ऐसी बात न होती, तो भगवान ने स्त्री और पुरुष को अलग-अलग बनाया ही क्यों?

एकता: वह इसलिये कि जिससे मनुष्य जाति की वंशबेल आगे चल सके। मानव जाति में ही नहीं, पशु, पक्षी, वनस्पति जैसे सभी जीवों में कुदरत ने नर और मादा की दो जात बनायी है। पर मनुष्य ने तो नर और मादा से स्त्री और पुरुष बनाकर उनमें ऊंच-नीच के भेदभाव खड़े कर दिये हैं।

कमला: तो क्या यह स्त्री-पुरुष के भेदभाव कुदरत ने नहीं बनाये?

एकता: नहीं, बिल्कुल नहीं! जरा सोचोगी तो तुम्हें एहसास होगा कि स्त्री और पुरुष में जितना अंतर है उससे कहीं ज्यादा समानता है।

फरजाना: वह कैसे?

एकता: देखो ना, जैसे पुरुष के दो हाथ-पैर हैं, वैसे ही स्त्री के भी हैं!

रेशमा: बिल्कुल! कुदरत ने पुरुष को दो के बदले चार हाथ तो दिये नहीं!

एकता: जैसे पुरुष के हृदय, मस्तिष्क और फेफड़े होते हैं, वैसे ही स्त्री के भी होते हैं।

कमला: हां, यह तो है, हमने पढ़ा था कि श्वसनतंत्र, पाचनतंत्र, रक्त संचारतंत्र, चेतनातंत्र इत्यादि शरीर के सभी तंत्र स्त्री और पुरुष में एक जैसे ही होते हैं।

एकता: इसका कारण यह है कि स्त्री और पुरुष दोनों मनुष्य हैं तभी तो दोनों के शरीर के लगभग सभी अंग और तंत्र एक समान हैं। अंतर सिर्फ प्रजननतंत्र और प्रजनन अंगों में ही है। स्त्री व पुरुष के प्रजननतंत्र अलग हैं, तभी तो मानव जाति की वंशबेल आगे बढ़ती है।

फरजानाः लेकिन वही तो खास बात है। औरत बच्चों को जन्म देती है, इसीलिये उसे यह सब सहना पड़ता है।

आशाः हां, अगर मेरी रोशनी नहीं होती तो मैं अपने पति की मार और ताने सहन करने के बजाय कब की उसका घर छोड़कर चली जाती।

नीरुः अरे बहन! तू तो पढ़ी-लिखी है और नौकरी करती है, इसीलिए ऐसा सोच सकती है। नहीं तो, अगर स्त्री के सिर पर उसके पति की छत ना हो तो उसका पति बनने के लिए सौ भेड़िये ताक में रहते हैं।

एकताः लेकिन क्या तुमने कभी सोचा है कि हर देश में, हर समाज में, हर काल में स्त्री ही बच्चे को जन्म देती आई है। इसके बावजूद हर देश में, हर संस्कृति में और हर काल में स्त्री-पुरुष के बीच के भेदभाव एक जैसे नहीं होते।

रेशमाः हां, सच है। मेरी दादी या नानी जितना अन्याय सहती थीं, उसकी तुलना में मेरी अम्मी को अधिक छूट मिली है और मुझे तो उससे भी कहीं अधिक मौके व आज़ादी मिल रही है।

कमलाः मेरी दादी ने तो स्कूल का मुंह तक नहीं देखा, मेरी मां को स्कूल में तो भेजा गया था पर कॉलेज में नहीं जाने दिया गया और हम तो ग्रेजुएट होकर आगे पढ़ने के सपने देख रहे हैं।

रेशमाः मेरी दादी को तो लगता है कि मैं बिल्कुल आज़ाद हो गई हूं।

एकताः पूरी बात का रहस्य इसी में है कि कुदरत ने स्त्री और पुरुष को अलग बनाया, लेकिन उनके बीच ऊंच-नीच के भेदभाव तो मनुष्य ने ही खड़े किये हैं, इसलिये वे देश, स्थल और काल के अनुसार बदल जाते हैं।

नीरुः मुझे तो तुम्हारी बात बिलकुल समझ में नहीं आ रही है।

एकताः देखो, मैं समझाती हूं। छोटा बच्चा रो रहा हो तो उसे सब क्या कहते हैं?

कमलाः "चुप रह, यों लड़कियों की तरह क्या रोता है? क्या तू लड़की है, जो रो रहा है?"

एकताः जरा सोचो, कि सभी बच्चे जब छोटे होते हैं, तब रोते ही हैं, पर हम उनको डरा-धमकाकर यह सिखाते हैं कि रोने का गुण तो

लड़कियों का ही होता है इसलिए लड़कों को नहीं रोना चाहिए। और अगर कोई लड़की बड़ी शरारती हो, उधम मचाती हो, नये-नये जोखमभरे काम करती हो, तो?

रेशमा: तो उसे फौरन टोक दिया जाता है, "बस भी कर अब, लड़की की जात को यह सब शोभा नहीं देता।"

आशा: और लगे हाथ कह दिया जाता है कि "तुझे तो ससुराल जाना है, यही हाल रहे तेरे तो हमारी नाक ही कटा देगी तू।"

एकता: इस तरह बचपन से ही लड़की को दबे रहना, डर-डर के जीना और सबका कहा मानना सिखाया जाता है और लड़के को उससे ठीक उल्टी शिक्षा दी जाती है। फिर हम कहते हैं कि पुरुष बहादुर है, शक्तिशाली है, वह बाहर की दुनिया में माथापच्ची करने में सक्षम है और स्त्री बेचारी घर के कोने में छिपी रहे, तभी वह सुरक्षित रहेगी। इस तरह हमने तय कर दिया है कि स्त्री-पुरुष के गुण अलग-अलग हैं, उनके काम अलग है, अतः उनके अधिकार भी अलग-अलग हैं। मात्र अलग-अलग ही नहीं, बल्कि स्त्री के गुण और काम पुरुष से निम्न दर्जे के हैं, इसलिए उसके अधिकार भी कम होने चाहिए।

नीरु: अरे बहन! थोड़ा खोलकर समझाओ।

एकता: बच्चे को स्त्री ही जन्म दे सकती है, क्योंकि गर्भाशय स्त्रियों में ही होता है। लेकिन अगर बच्चा रोता हो तो उसे चुप कराना, वह पेशाब करे तो उसके कपड़े बदलने का काम भी स्त्री ही कर सकती है पुरुष नहीं, यह बात तो सही नहीं है।

नीरु: नहीं, नहीं बहन! तुम तो बात को कुछ ज़्यादा ही बढ़ा रही हो। स्त्री का काम, स्त्री का है और पुरुष का काम, पुरुष का। पिछले महीने जब मुझे खूब तेज़ बुखार था और मैं खाना भी नहीं बना पा रही थी, तो इन्होंने कच्चा-पक्का बना के खा लिया, वे हमारे जैसा खाना तो नहीं बना सकते है ना?

एकता: नीरु मौसी! अपने गांव में जाति-भोज होता है, तो रसोई कौन बनाता है? वह रसोइया क्या स्त्री होती है?

कमला: हां, और शहरों में बड़े-बड़े होटलों में भी प्रशिक्षित रसोइये रसोई तैयार करते हैं और हम उंगलियां चाट कर खाना खाती हैं, इसलिए

यह कहना गलत है कि पुरुष को रसोई करना नहीं आता।

आशा: ठीक कह रही हो। चूंकि पुरुषों को खाना पकाना सिखाया नहीं जाता इसलिए वे अच्छी तरह खाना बना नहीं सकते।

एकता: तुमने बच्चे की देखरेख की बात कही। पता है दुनिया के कई देशों में जैसे - नार्वे, स्वीडन आदि में स्त्री-पुरुष सभी काम करते हैं। हमारी तरह वे संयुक्त परिवारों में नहीं रहते, इसलिए घर में बच्चों की देखभाल करने वाले कोई बड़े-बुजुर्ग न होने के कारण वहां स्त्री की प्रसूति के समय, जैसे मां को प्रसूति अवकाश मिलता है, वैसे ही पिता को पितृत्व अवकाश मिलता है। शुरुआत के कुछ महीने मां बच्चे की देखभाल करती है, बाद में जब वह काम पर जाती है, तब पिता अपनी छुट्टियों का उपयोग करके बच्चे को अकेले संभालता है। इससे धीरे-धीरे, इन देशों में पिता में भी मां की ही भांति स्नेह व ममता जैसे गुणों का विकास हुआ है और परिणामस्वरूप बच्चों का लालन-पालन ज़्यादा अच्छी तरह से हो रहा है, क्योंकि बच्चों को अकेली मां का ही नहीं बल्कि माता-पिता दोनों का ममत्व व स्नेह मिल रहा है। साथ ही उन्हें बाहरी दुनिया में जीने के तौर-तरीके की सीख दोनों से मिल जाती है। पुरुषों के स्नेहशील बनने से समाज में हिंसा, तनाव, एक-दूसरे को नीचा दिखाने और स्पर्धा के तत्व कम हुए हैं। इस तरह पूरे समाज को फायदा हुआ है।

रेशमा: तो क्या आप यह कहना चाहती हैं कि स्त्री-पुरुष के बीच जो शारीरिक अंतर कुदरत ने दिया है, वह बहुत कम है और ऊंच-नीच का भेदभाव तो समाज ने ही खड़ा किया है।

एकता: हां, और यह भेदभाव समाज ने खड़ा किया है, इसलिए समाज इसे बदल भी सकता है। लेकिन समाज तभी बदलता है जब हम समाज के सामने सवाल करते हैं।

आशा: समाज के सामने सवाल करने वाला एक गाना मुझे याद आ रहा है। चलो हम सब ये गाना गायें। (सभी गाते हैं)

बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?
सदियों पुराने भेद रहेंगे क्यों ज्यों के त्यों?

एक जमाना बेटी को डूबाया दूध में,
आज बेटी को गर्भ में ही मार देते क्यों?
बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

बेटा जन्मे बांटो पेड़े बेटी की जलेबी,
मां उदास बाप के सर पे बोझ भारी क्यों?
बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

बेटा खेले गुल्ली डंडा बेटी करे घर काम,
बेटा कमा के घर उजियारे बेटी को ससुराल?
बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

जितने मां के उतने बाप के बच्चे हैं दोनों के,
फिर भी मां के सर पे ये बोझ भारी क्यों?
बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

दोनो करें मेहनत और संग करे काम,
एक को मिले वेतन ज्यादा, एक को थोड़ा क्यों?
बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

औरत मरद कहलाये गाड़ी के दो पहिये,
एक जो ऊंचा एक जो नीचा कैसे चले काम,
बेटा प्यारा बेटी नहीं मैं पूछूं जी क्यों?

- डॉ. सरुप ध्रुव

(मूल गुजराती का हिन्दी रूपान्तर)

नीरुः गाना तो अच्छा था लेकिन जो सवाल पूछे गये हैं उसके जवाब अभी तक तो नहीं मिले हैं और समाज में कोई खास परिवर्तन दिखाई नहीं देता है। लेकिन क्या पूरी दुनिया में बेटों का महत्त्व इसी तरह से है?

एकताः बेटों को प्राथमिकता देना और बेटियों को जन्म लेने से भी रोकना जैसे भेदभाव भारत, पाकिस्तान, चीन जैसे कुछ दक्षिण एशियाई देशों में दिखाई देते हैं। जबकि अफ्रीका और पश्चिम के देशों में स्त्री-पुरुष के बीच के भेदभाव का अलग स्वरूप देखने को मिलता है।

फरजानाः मुझे तो यह बात बिल्कुल नई लग रही है। भला पहले जमाने में स्त्रियां यह सब सोचती थीं क्या? पश्चिमी शिक्षा प्राप्त करने पर उनके विचारों की हवा बह रही है। इस वजह से ही यह सवाल खड़ा हुआ है।

(इसी बीच शकरी आ पहुंचती है)

शकरीः मुझे थोड़ी देर हो गई। आज काम कुछ ज्यादा था, इसलिए उसे निपटाने में वक्त लगा। सरोज की कल परीक्षा है, इसलिए मैंने उससे कहा कि तू अपनी पढ़ाई कर, मैं सब काम निपटा दूंगी। पर यह आप सब शिक्षा की क्या बात कर रहे थे?

रेशमाः ये नीरु बहन और फरजाना बहन कह रही थीं कि शिक्षा के कारण स्त्रियां बहुत स्वतंत्र हो गई हैं, आशा पढ़ी-लिखी है इसीलिए वह घर छोड़ने का विचार कर रही है।

शकरीः नहीं रे, मुझे तो उल्टा ही लगता है। आप पढ़े-लिखे लोग बहुत सोच-विचार करते हैं, पर फौरन फैसला करने में डरते हैं। मैंने तो बचपन से ही मजदूरी की है और विवाह के बाद भी मजदूरी करती थी। पर पति की मार और तानों से दुखी हो गई थी। इसलिए मन में आया कि मैं मजदूरी करके घर चलाती हूं, बच्चों को पालती हूं और उनको भी खिलाती हूं, फिर भी वे वहम के मारे रोज शाम मुझे ही पीटते हैं-तो क्यों न मैं अपने ढंग से जिंदगी जीऊं? घर छोड़े आज दस बरस बीत गए, अब तो मेरी बेटी भी बड़ी हो गई है। दसवीं कक्षा में पढ़ती है और समय मिलने पर मेरी मदद भी करती है। साल-दो-साल में बेटा भी बड़ा हो जाएगा तब दोनों का सहारा होगा।

आशाः सही में, शकरी बहन आप समझदार हो, पढ़ी-लिखी नहीं हो तो क्या हुआ, पढ़े-लिखों को टक्कर दे सकती हो। लेकिन एकता बहन आप अलग-अलग देशों की बात कर रहे थे-वो बताओ ना!

एकता: मैं बता रही थी कि दुनिया के सभी देशों में स्त्री और पुरुष की शारीरिक बनावट एकसी है लेकिन समाज के रीति-रिवाज, धर्म और संस्कृति के नाम पर विविध प्रकार के भेदभाव उत्पन्न किये जाते हैं।

कमला: जैसे चीन में लड़कियों के पैर छोटे रखने के लिए बचपन से ही उन्हें फिट बूट पहनाये जाते है।

एकता: और अफ्रीका में स्त्री के योनि लिंग को छेदा जाता है ताकि उसे जातीय आंनद न मिले।

रेश्मा: मैने सुना है कि पश्चिम के कई देशों में ईसाई धर्म के नाम पर औरतों के गर्भपात कराने के अधिकार का विरोध किया जाता है।

फरजाना: और मेरी मौसी कहती थी कि कई अरब देशों में अगर किसी स्त्री पर बलात्कार होता है तो इस्लाम के नाम पर उसको झीना की सज़ा में पत्थर मार-मार के खतम कर देते है।

नीरु: झीना?

एकता: यानि की व्यभिचार, और हिन्दुओं में धर्म के नाम पर विधवा स्त्री को सती होने का समर्थन किया जाता है। इस तरह, स्त्री-पुरुष के बीच असमानता और भेदभाव को बरकरार रखने के लिए कभी धर्म तो कभी संस्कृति और कभी कानून का उपयोग किया जाता है।

शकरी: औरत की जान लेने वाले धर्म और संस्कृति का क्या काम?

एकता: शकरी की बात सही है, स्त्री चाहे पढ़ी-लिखी हो या अनपढ़, किसी भी देश, वर्ग, धर्म या जाति की क्यों न हो, खुद पर होने वाले भेदभाव और अन्याय के खिलाफ उसने किसी न किसी तरह से अपना विरोध जताया है। अपने ही देश की बात करें तो इतिहास में हमें ऐसे कई उदाहरण मिल जायेंगे, जहां हर युग में हर धर्म की स्त्रियों ने खुद पर होने वाले अन्याय का विरोध किया है।

नीरु: इसके बारे में थोड़ा और बताओ ना!

एकता: हां, हां, जरूर। इस बारे में हम अगली मीटिंग में विस्तार से चर्चा करेंगे।

सामाजिक भेदभाव को स्त्रियों की चुनौती: प्राचीन काल

(आज सभी बहनें समय से मीटिंग में आ गईं)

रेशमा: एकता बहन! आज आप पुराने जमाने की स्त्रियों द्वारा अन्याय के विरोध के बारे में बताने वाली हैं ना? हम सब सुनने को उत्सुक हैं।

एकता: हां, लेकिन इससे पहले हम पिछली बार की गई बातों को जरा याद कर लें। जीव विज्ञान की दृष्टि से स्त्री और पुरुष में क्या-क्या शारीरिक अंतर है और समाज ने दोनों में कैसे भेदभाव खड़े किये हैं, इन्हें फिर एक बार संक्षेप में समझ लें।

शकरी: हां हां, सही है। मैं पिछली बार देर से आई थी, इसलिए जो बाते हुईं थीं उन्हें थोड़ा संक्षेप में बता देंगी तो अच्छा होगा।

लड़का-लड़की, स्त्री-पुरुष के बीच समाज के द्वारा खड़े किये गए भेदभावों को जेंडर कहा जाता है।

सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा बालक-बालिका का अलग-अलग ढंग से पालन-पोषण होने के कारण जिस तरह उनका विकास होता है, उससे जेन्डर भेदभाव पैदा होता है।

सामाजिक भेदभाव स्थान, समय, देश, धर्म, संस्कृति के अनुसार अलग-अलग होता है और बदलता रहता है।

यह समाज के द्वारा बनाये जाने के कारण बदलता रहा है और बदलाव की प्रक्रिया अभी भी जारी है।

आशा: बिल्कुल ठीक है, तो अब हम पुराने जमाने की बात करें?

कमला: और यह देखें कि समाज के रीति-रिवाज और कानून किस तरह समय के साथ बदले हैं।

एकता: वैदिक काल में, रामायण व महाभारत जैसे महाकाव्यों के युग में, मध्य युग में या उनके बाद आने वाले सुधार युग और आजादी के आंदोलन में स्त्रियों ने समाज में फैली परंपरागत मान्यताओं के सामने या फिर अपने प्रति अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई है। इन सबके बारे में हम एक के बाद एक जानकारी लेंगे। पहले हम वेदों के समय की बात करेंगे। क्या आप वेद-कालीन किसी स्त्री के बारे में जानती हैं?

कमला: हमने पढ़ा है कि वैदिक काल में गार्गी, मैत्रेयी, अपाला, लोपामुद्रा जैसी ऋषि-स्त्रियां भी थीं, जो पुरुषों की भांति ही वेद की ऋचाएं रचती थीं। और गार्गी ने तो भरी सभा में याज्ञवल्क्य जैसे विद्वान ब्राह्मण को चुनौती दी थी।

रेशमा: मैंने भी सुना है कि ऋषि-मुनियों के जमाने में स्त्रियां बहुत आगे थीं। गार्गी की कहानी सुनाइए ना!

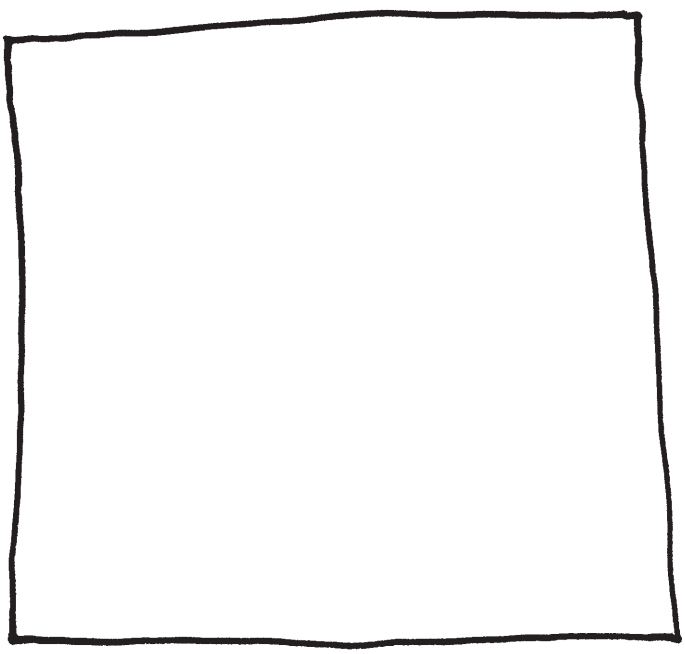

एकता: कमला! तू ही बता, गार्गी के बारे में तूने क्या पढ़ा है?

(यह सुनकर कमला खुश हो गई। शिक्षिका बनने का उसका सपना आज मौका मिलने पर पूरा होता दिखाई दिया और अपनी प्रिय अध्यापिका सरोज बहन को याद कर वह उनके जैसी शैली में सबको समझाने लगी।)

कमला: वैदिक काल की बात है यानी आज से लगभग चार-पांच हजार वर्षों से भी पहले की बात है। उस समय गार्गी नामक एक विदुषी थी। वह ब्रह्मवादिनी के रूप में जानी जाती थी।

शकरी: यह विदुषी और ब्रह्मवादिनी का क्या मतलब है?

कमला: विदुषी का मतलब है विद्वान स्त्री और ब्रह्मवादिनी का मतलब है परम ईश्वर या ब्रह्म के बारे में ज्ञान प्राप्त करने वाली और उपदेश देने वाली स्त्री।

एक समय राजा जनक ने ज्ञान यज्ञ का आयोजन किया था। उसमें वाद-विवाद और चर्चा-परिचर्चा करने के लिए दूर-दूर से विद्वान ब्राह्मण आये थे। राजा जनक ने घोषणा की कि जो ब्राह्मण सबसे अधिक विद्वान होगा, उसको सोने से मढ़ी सींगों वाली एक हजार गायें दान में दी जायेंगी। राजा की घोषणा सुनकर सभी ब्राह्मणों का जी ललचा उठा पर कौन कहे कि वह सबसे अधिक विद्वान है, सभी को संकोच हो रहा था। तभी याज्ञवल्क्य नामक विद्वान खड़े हुए और उसने अपने शिष्यों से गायें अपने आश्रम में ले जाने को कहा। इस पर यज्ञ के मुखिया अश्वस ने कहा कि पहले आप शास्त्रार्थ में तमाम विद्वानों को हराएं उसके बाद ही गायें ले जायें।

याज्ञवल्क्य के ज्ञान के सामने सारे विद्वान वाद-विवाद में हार गये। अंत में ब्रह्मवादिनी गार्गी और याज्ञवल्क्य दो ही रह गये। गार्गी एक के बाद एक प्रश्न पूछने लगी और याज्ञवल्क्य उसका जवाब देते रहे। धीरे-धीरे गार्गी के प्रश्न अधिक जटिल होते गये। आखिर में उन्होंने एक ऐसा प्रश्न पूछा जिसका उत्तर देने के बजाय याज्ञवल्क्य ने कहा, "बस कर गार्गी, अब अगर एक भी और प्रश्न पूछा तो तेरे मस्तक के टुकड़े-टुकड़े हो जाएंगे।" यह सुनकर गार्गी चुप हो गई। याज्ञवल्क्य जीत गये और उन्हें सोने से मढ़ी सींगों वाली एक हजार गायें दान में मिलीं।

इस तरह वैदिक काल में स्त्रियों को भी पुरुषों के समान पढ़ने का अवसर मिलता था।

(कमला की बात कहने की शैली से सब खुश हो गये।)

एकता: बहुत अच्छा, कमला! अगर तू इसी तरह प्रगति करती रहेगी तो एक दिन शिक्षिका बनने का तेरा सपना जरूर पूरा होगा। पर मैं इतना कहना चाहती हूं कि तूने जो पढ़ा है उसमें से केवल आधी बातें ही सच हैं। वैदिक काल में कई ऐसी स्त्रियां थीं, जो पुरुष-ऋषियों की बराबरी कर सकें। परंतु यह बात सही नहीं है कि उस समय सभी स्त्रियों को पुरुषों के जितने अवसर और अधिकार प्राप्त थे।

आशा: ऐसा तुम कैसे कह सकती हो?

एकता: यह इसलिए कि वेदों में उस समय के सैंकड़ों पुरुष ऋषियों के नाम देखने में आते हैं, जबकि उसकी तुलना में स्त्री ऋषियों की संख्या मुश्किल से ८ से १० के बीच ही है। ऋग्वेद सबसे पुराना वेद माना जाता है जिसमे ऋषियों द्वारा बनायी गयी लगभग १००० ऋचाएं हैं। उसमें स्त्री-ऋषियों द्वारा बनाई हुई मुश्किल से १२-१५ ऋचायें ही देखने को मिलती हैं। इसलिए सभी स्त्रियों को समान अवसर मिलता था, यह बात सही नही है। परंतु कुछ स्त्रियां यह काम कर सकीं, यह साबित करता है कि स्त्री प्राकृतिक रूप से पुरुषों की तुलना में कम नहीं है।

गार्गी का ही उदाहरण लें तो वाद-विवाद के अंत में उसके द्वारा पूछे गए प्रश्न अनुत्तरित ही रहे। उसका एक मतलब ऐसा भी लिया जा रहा है कि वास्तव में स्त्री होने के नाते उसने इतने प्रश्न पूछे थे, इसलिए उसे चुप कराने के लिए यह एक प्रकार की धमकी दी गई।

शकरी: सच कहती हो, ऐसा ही हुआ होगा। जब मेरा तलाक हुआ था, तब पूरी न्यात इकट्ठी हुई थी। सब उनकी तरफ ही बोल रहे थे, लेकिन मैंने बिना डरे अपनी बात कह दी। आखिरकार मेरे किसी भी सवाल का जवाब पंचों के पास नहीं था तब उन्होंने कहा कि - "अब चुप हो जा, औरत जात के लिए इतनी लंबी जबान होना ठीक नहीं है।"

रेशमा: हां, मैने देखा है कि जब हमारी बात का कोई जवाब नहीं होता तो समाज हमें इसी तरह चुप करा देता है।

एकता: वैदिक काल के बाद महाकाव्यों के समय में, मतलब रामायण व महाभारत काल में तो स्त्रियों की दशा और ज्यादा खराब हो गई।

नीरु: तो क्या रामायण और महाभारत वेद के समय में नहीं लिखे गये थे?

शकरी: पहले महाभारत की घटना हुई या रामायण की?

एकता: वेद, रामायण और महाभारत के निश्चित समय के बारे में विद्वानों और इतिहासकारों के बीच अनेक मतमतांतर हैं लेकिन हमे उसमें जाने की जरूरत नहीं है!

कमला: सही है, हम थोड़े ही इतिहास पढ़ने बैठे हैं? हमें तो बस यही जानना है कि अलग-अलग समय पर औरतों की क्या स्थिति थी।

रेशमा: और उसे बदलने के लिए औरतों ने क्या किया?

एकता: सही बात, रामायण और महाभारत के युग में भी चुपचाप अन्याय सहन करने के बदले, कई स्त्रियों ने किसी न किसी तरीके से अपना विरोध तो व्यक्त किया ही था।

नीरु: हां, जैसे सीता ने राम के अन्याय का विरोध किया था।

कमला: सीता पर-पुरुष के घर रही थी, इसलिए राम ने उसकी अग्नि परीक्षा ली और उसके बाद भी लोगों के तानों की वजह से एवं गर्भवती होते हुए भी उसे निकाल दिया। लव-कुश के जन्म के बाद जब सीता को वापिस बुलाया, तब उसने राम के पास आने के बजाय धरती में समा जाना उचित समझा।

आशा: फिर भी राम को पुरुषोत्तम कहा जाता है। सबसे उत्तम माने जाने वाले पुरुष ने ही ऐसा अन्याय किया, तभी तो बाकी के पुरुषों के लिए मनमाने व्यवहार का रास्ता खुल गया ना! मेरी हालत भी कुछ ऐसी ही है।

फरजाना: तो बहन! क्या अब भी तेरा पति तुझ पर संदेह करता है?

आशा: हां, उसे लगता है कि रोशनी उसकी बेटी नहीं है। ऑफिस के काम से एक बार अपने साथी कार्यकर्ता के साथ बाहर गई, बस इतनी सी बात से उसका विश्वास मुझ पर से उठ गया।

नीरु: लेकिन राम को सीता पर अविश्वास नहीं था। प्रजा में से एक धोबी ने सवाल उठाया था, इसीसे उन्होंने सीता का त्याग किया। वे एक प्रजावत्सल राजा थे और एक साधारण धोबी की बात को भी महत्त्व देते हुए उन्होंने यह कदम उठाया था।

रेशमाः पर इससे साबित तो यही हुआ कि राम, अर्थात पुरुष, भले ही जंगल में अकेले भटके, उसके चरित्र पर कोई उंगली नहीं उठेगी और सीता, अर्थात स्त्री के चरित्र पर अगर कोई संदेह भी करेगा तो वह कलंकित हो जाएगी।

कमलाः अगर राम वास्तव में जनमत को महत्त्व देने वाले राजा का दायित्व निभाना चाहते थे तो सीता उनकी पत्नी ही नहीं, उनकी प्रजा भी थी।

शकरीः और जिस तरह सीता ने राम के वचन की खातिर चौदह बरस का वनवास भोगा, वैसे ही राम ने भी सीता के साथ वनवास भोगा होता तो यह साबित हो जाता कि उन्होंने पति के रूप में अपना दायित्व निभाया।

आशाः बहन शकरी! तुम्हारी बात सोलह आना सही है। अयोध्या के राजा का दायित्व राम की बजाय कोई दूसरा व्यक्ति भी निभा सकता था, पर सीता के पति और उसके गर्भ में पलने वाले लव-कुश के पिता के रूप में अपना कर्तव्य तो मात्र राम ही निभा सकते थे। अगर राम ने दूसरे को राज सौंपकर सीता के साथ वनवास जाना स्वीकार किया होता तो उन्होंने एक आदर्श राजा के साथ-साथ, आदर्श पति, पिता और राज्य की तमाम स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा का आदर्श प्रस्तुत किया होता।

एकताः यह अन्याय इतना स्पष्ट है कि भगवान के रूप में राम की पूजा करने वाले समाज में आज भी राम के इस व्यवहार का परोक्ष विरोध करते प्रभावी भजन गाये जाते हैं।

नीरुः हां, उस भजन में नहीं कहा गया?

सबः कौनसा भजन, हमें सुनाओ न....

राम राम राम...

दया के सागर होकर, कृपा के निधान बनकर,
आप भगवान कहलाते हो।
पर राम आप सीताजी की तुलना में कम ही हो, पर राम...

सोलह सिंगार सजे, मंदिर के द्वार में,
फूल और चंदन से पूजे जाते हो,
पर मेरे राम आप सीताजी की तुलना में कम ही हो, पर राम...

कान के कच्चे हो, काहे के भगवान हो?
अग्नि परीक्षा किसकी ली,
आपकी परछाईं बनके, वन में चली, उसको?
लोगों की बातों में आकर त्यागा,
चाहे पल-पल के ज्ञाता माने जाओ
पर राम आप सीताजी की तुलना में न आओ। मेरे राम...

आपसे भी पहले अशोक वन में,
सीताजी ने रावण को हराया,
दैत्यों के बीच में अकेली थी नारी, फिर भी,
दस मस्तक वाला, वहां ना जीता,
मरे को मारकर क्या बड़ा पराक्रम किया?
जीतने का खाली यश लिया!
मेरे राम आप सीताजी की तुलना में न आओ। मेरे राम...

- अविनाश व्यास

(श्री अविनाश व्यास द्वारा लिखे मूल गुजराती का हिन्दी रूपान्तर)

एकता: रामायण में सीता, तो महाभारत में द्रौपदी का पात्र पुरुष-प्रधान व्यवस्था के समक्ष प्रश्न खड़ा करता है। इस बात को अगर गहराई से देखें तो उस समय औरतों की जो स्थिति थी उसका अंदाजा मिलेगा और आज भी उसका कितना गहरा असर हुआ है वो पता चलेगा। जरा सोचो द्रौपदी का सभा के बीच वस्त्रहरण क्यों हुआ?

नीरु: क्योंकि उनके पति उन्हें जुए में हार गए थे।

कमला: हां, लेकिन द्रौपदी ने भरी सभा में अपने प्रति अन्याय के खिलाफ बड़े-बुजुर्गों से प्रश्न पूछे कि पहले जुए में खुद को हार जाने के बाद पत्नि को दांव पर लगाने का पति को हक है क्या?

एकता: तुम्हारी बात सही है। द्रौपदी की हिम्मत पर अवश्य गर्व होता है।

परंतु युधिष्ठिर ने सिर्फ अपनी पत्नी को ही नहीं, अपने भाइयों को भी दांव पर लगा दिया था। आज की स्थिति में क्या एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की स्वतंत्रता का सौदा कर सकता है? लेकिन उस समय में युधिष्ठिर के एक भी भाई या कौरव सभा के किसी भी विद्वान के मन में ऐसा प्रश्न तक नहीं उठा! कारण यह है कि उस जमाने में पितृसत्तात्मक परिवार का स्वरूप ही कुछ ऐसा था कि परिवार का मुखिया परिवार का मालिक समझा जाता था। उसकी आज्ञा का पालन करना बाकी सबका कर्त्तव्य था।

दूसरा प्रश्न यह है कि द्रौपदी का चीर-हरण क्यों किया गया? और क्यों द्रौपदी के प्रश्नों के सामने पूरी सभा मौन रही? इसका उत्तर यह है कि तब द्रौपदी एक कुलवधू न रहकर दासी बन गई थी और उस जमाने में कुलवधू के शील व स्वाभिमान की मर्यादा बनाये रखने के लिए युद्ध होते थे, पर दासी के साथ ऐसे बर्ताव तो रोज-रोज होते थे। दास या दासी को एक इन्सान नहीं माना जाता था, मान-सम्मान व अधिकार तक नहीं थे।

कमला: द्रौपदी के साथ जो हुआ वो आज के समाज में भी होता है। आज अगर हमारे गांव में ऐसा हो तो क्या होगा?

रेशमा: अरे, फौरन हमारा मंडल इकट्ठा होकर, मोर्चा लेकर सभा में जा धमकेगा और स्त्री का चीर हरण करने वाले को सबक सिखा देगा।

फरजाना: और फिर पुलिस के पास जाकर उस पर कानूनी मुकदमा कर देगा।

एकता: हां, आज औरतों पर होने वाली हिंसा के खिलाफ अलग-अलग तरीके से विरोध करने की गुंजाइश मौजूद है। लेकिन उस जमाने में क्या हुआ? उस अपमान से द्रौपदी कैसे बची?

नीरु: उस जमाने में स्त्रियों के मंडल नहीं थे, इसलिए कृष्ण भगवान ने चीर बढ़ाकर उसकी लाज बचाई।

शकरी: लेकिन मेरे मन में ऐसा प्रश्न उठता है कि कृष्ण भगवान ने अदृश्य रहकर ही चीर क्यों बढ़ाया? उन्होंने दुर्योधन, दु:शासन का हाथ पकड़कर रोका क्यों नहीं? एक स्त्री का अपमान करने के बदले में उन्हें दंडित क्यों नहीं किया?

एकता: आपका प्रश्न बिलकुल सही है। कृष्ण ने सिर्फ इतना ही किया जिससे द्रौपदी सभा के सामने नग्न न हो और कुरुकुल की कुलवधू की लाज बच जाए। लेकिन अगर द्रौपदी के बजाय कोई दासी होती तो क्या कोई उसे बचाता? कृष्ण उसकी पुकार सुनते? नहीं। कारण यह है, कि उस जमाने में दास-दासी के साथ ऐसा ही व्यवहार किया जाता था। जिस तरह से गाय, घोड़े, हाथी आदि पशु राजा की सम्पत्ति माने जाते थे, उसी तरह से दास-दासी भी उनकी सम्पत्ति समझे जाते थे और राजा उन्हें किसी को भी दान में या भेंट में दे सकते थे। यह तो वर्ण व्यवस्था की शुरूआत ही थी।

कमला: बात सच है। महाभारत में शूद्र या निम्न वर्ण के माने जाने वाले एकलव्य के साथ गुरु द्रोण ने जो अन्याय किया और कर्ण को सूत पुत्र होने के कारण विद्या प्राप्त करने हेतु जो अपमान सहना पड़ा, उस प्रसंग को पढ़कर मुझे तो गुस्सा आ गया था।

एकता: उस जमाने में अत्यंत प्रतिभाशाली होने के बावजूद शूद्र को ब्राह्मण और क्षत्रिय की तरह शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। तो भला उनकी स्त्रियों के अधिकार पर विचार भी कैसे संभव होता? उच्च वर्ण की स्त्रियों के लिए भी पुरुषों जैसी नहीं, वरन् खासतौर पर अलग प्रकार की मर्यादित शिक्षा ही उपलब्ध थी।

इस तरह महाभारत काल में ऊँच-नीच और भेदभाव वाली वर्ण व्यवस्था की शुरुआत हो चुकी थी और उसके पश्चात मनु स्मृति के समय में तो वर्ण व्यवस्था और भी अधिक मजबूत हो गई।

आशा: मनु स्मृति का नाम मैंने बहुत बार सुना है। उस पुस्तक में क्या था, इसे जरा विस्तार से बताइये ना।

एकता: मनु स्मृति काल की बात अब अगली बैठक में करेंगे।

पितृसत्ता और जाति प्रथाः मनु स्मृति काल

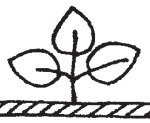

एकताः मनु स्मृति नामक ग्रंथ करीब ३ हजार साल पहले लिखा गया था। इस ग्रंथ में उस जमाने के कायदे-कानून लिखे हुए हैं। आज भी हिन्दुओं के पारिवारिक नियमों-कानूनों की व्याख्या करते समय मनु स्मृति को याद किया जाता है। आपने उसके बारे में क्या सुना है?

आशाः मैं जब भी तलाक की बात करूं, तो मेरी बुआ मुझे मनु महाराज की बात याद दिलाती है कि "स्त्री को स्वतंत्र होने का अधिकार ही नहीं है। स्त्रियों को बचपन में पिता, युवावस्था में पति और वृद्धावस्था में पुत्र के सहारे रहना चाहिए"। क्या यह उसी मनु स्मृति की बात है?

कमलाः मैने तो सुना है कि मनु स्मृति में यह भी लिखा है कि "जहां स्त्रियों की पूजा होती है वहां देवता का वास होता है"।

एकताः हां, पर उसी स्त्री की पूजा जो उच्च वर्ण की हो और जैसे आशा ने बताया, जो पतिव्रता धर्म का पालन करे। मनु स्मृति में ब्राह्मणों के वंश की शुद्धता को बचाये रखने के लिए स्त्रियों के लिए पवित्रता और पतिव्रता के अनेक नियम थे। जिससे साफ पता चलता है कि उस समय समाज में मेहनत करने वाले शूद्रों और सभी वर्ण की स्त्रियों का स्थान कैसा था? जैसे स्त्री पर बलात्कार करने की सजा भी उस स्त्री और पुरुष के वर्ण के आधार पर ही तय होती थी। अगर कोई 'अब्राह्मण' पुरुष (तथाकथित निम्न जाति का पुरुष) किसी ब्राह्मण स्त्री पर बलात्कार करे तो उसको सूखे घास में आग लगाकर जला देने की सजा थी और कोई ब्राह्मण पुरुष 'अब्राह्मण' वर्ण की स्त्री पर बलात्कार करे तो उसे मात्र दंडित किया जाता था।

फरजानाः अरे ! यह कैसा कानून? बलात्कार तो हर स्त्री के लिए नरक जैसा अनुभव है। फिर चाहे वह ब्राह्मण हो या शूद्र।

एकताः कारण यह, कि स्त्री को व्यक्ति नहीं पर उसके परिवार या वर्ण की संपत्ति माना जाता था और बलात्कार को स्त्री पर हिंसा के रूप में नहीं वरन स्त्री जिस पुरुष या वर्ण की है, उसकी पवित्रता और अधिकार पर आक्रमण के रूप में देखा जाता था। पवित्रता और पतिव्रता के नियम मात्र उच्च वर्ण की स्त्रियों के लिए ही थे। वे पति की मृत्यु के बाद कड़े रीति-रिवाजों के साथ वैधव्य का पालन करतीं जबकि निम्न वर्ण की स्त्रियां पति की मृत्यु के बाद पुनर्विवाह कर सकती थीं, या माला पहना सकती थीं।

कमलाः पर ऐसा क्यों? अलग-अलग वर्ण की स्त्रियों के लिए अलग-अलग कानून क्यों थे?

एकताः क्योंकि उच्च वर्ण के लोग अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य द्विज माने जाते थे अर्थात् उनको यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार था और इससे ऐसा माना जाता था कि इनका दूसरा जन्म होता है। उनके कुछ विशिष्ट धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक अधिकार थे, उसकी वजह से उनके पास संपत्ति थी। उनकी संपत्ति उनके वंश के उत्तराधिकारी को ही मिले इसलिए उनकी पत्नियों की 'पवित्रता' महत्त्वपूर्ण थी। उनकी लैंगिकता पर अंकुश रखने के लिए इस वर्ण की स्त्रियों को 'जनाने' में रहने के लिए बाध्य किया जाता और उन्हें उत्पादन का कोई काम करने की छूट नहीं थी, जिससे वे किसी पर-पुरुष के सम्पर्क में न आए।

दूसरी तरफ शूद्र अर्थात् मजदूरी करने वाले वर्ग के पास संपत्ति नहीं थी। यही वर्ग समाज को बनाये रखने के लिए जरूरी अनाज, कपड़ा और मौज-शौक की तमाम वस्तुएँ उत्पन्न करता था। अगर उनकी स्त्रियां उत्पादन के काम में मेहनत न करें तो समाज चल नहीं सकता था। इन स्त्रियों की मेहनत के अलावा इनके शरीर पर इनके पति के साथ-साथ इनके मालिक का भी हक रहता था। इनके लिए पवित्रता और पतिव्रतापन का उतना महत्त्व नहीं था। इस प्रकार वर्ग, जाति और स्त्री-पुरुष के बीच की असमानता परस्पर जुड़ गये।

शकरी: हां, आज भी हमारी 'नातरिया-नात' में स्त्री विधवा हो तो फिर से लग्न कर सकती है। ब्राह्मणों, बनियों और राजपूतों की जैसी प्रथा हमारे में नहीं है।

रेशमा: इसका मतलब यह है कि उच्च वर्ग और जाति की स्त्रियों पर परिवार के बंधन और नियंत्रण अधिक थे।

कमला: और निम्न वर्ग और जाति की स्त्रियों पर परिवार के बंधन कम थे पर उच्च जाति के पुरुषों द्वारा उनका शोषण होता था।

एकता: तुमने बिलकुल ठीक समझा। इस तरह की जाति और पितृसत्ता के तानों-बानों में बुनी व्यवस्था को नारीवादी लेखिकाएं 'ब्राह्मणवादी पितृसत्ता' कहती हैं।

आशा: आप इसे ब्राह्मणवादी पितृसत्ता कह रही हैं तो क्या जाति-व्यवस्था और पितृसत्ता सिर्फ हिन्दू धर्म में ही प्रचलित हैं?

एकता: जाति-व्यवस्था का जन्म हिन्दू धर्म के साथ जुड़ा हुआ है। अनेक सामाजिक और आर्थिक बदलाव के साथ-साथ इसमें भी बदलाव आये हैं। परंतु ऊंच-नीच के भेदभाव वाली जाति-व्यवस्था इतने बदलावों के बाद भी अपनी जगह टिकी हुई है। भारत में जितने भी धर्म के लोग हैं उनके धर्म में जाति-व्यवस्था न होने के बावजूद भी उनके दिनचर्या में यह व्यवहार दिखाई देता है। जैसे मूल इस्लाम धर्म में जाति-व्यवस्था नहीं है फिर भी भारतीय मुस्लिम समुदाय में इस प्रकार के भेदभाव दिखाई देते हैं। रही बात पितृसत्ता की, पितृसत्ता का स्वरूप अलग-अलग देश, धर्म और संस्कृति के हिसाब से बदलता रहता है, लेकिन स्त्रियों पर पितृसत्ता का मूलभूत नियंत्रण जारी रहता है।

रेशमा: इस पितृसत्तात्मक नियंत्रण का मतलब क्या है?

नीरु: पितृसत्ता यानि पिता की सत्ता?

एकता: पितृसत्ता को पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था भी कहा जाता है। इसका अर्थ सिर्फ पिता की सत्ता से ही नहीं है। पितृसत्ता या पुरुषों के वर्चस्व वाली समाज व्यवस्था, अर्थात ऐसी व्यवस्था, जिसमें स्त्री की श्रम शक्ति, प्रजननशक्ति और लैंगिकता पर परिवार, समाज और राज्य का अंकुश होता है। (पितृसत्ता के बारे में अधिक जानकारी हेतु संलग्न परिशिष्ट पढ़ें।)

श्रम शक्ति अर्थात् स्त्री की काम करने की शक्ति। स्त्रियां सुबह से शाम तक घर का काम करती हैं, पर उसका कोई मूल्य नहीं है।

नीरुः हां, यही कहा जाता है कि मुफ्त की रोटियां तोड़ती हैं।

फरजानाः पर बाहर का काम करे या नहीं, यह औरत खुद तय नहीं कर सकती।

आशाः और फिर कहा जाता है कि "तुमको काम करना हो तो करो, लेकिन घर और बच्चों को संभालते हुए।"

शकरीः नहीं भई, हम लोगों में तो मजदूरी करनी ही पड़ती है। मजदूरी करना नहीं आये तो स्त्री का विवाह ही नहीं होता।

एकताः हां, क्योंकि जैसा मैने कहा, पितृसत्ता ब्राह्मणवादी अर्थात् ऊंच-नीच के भेदभाव वाली जाति प्रथा पर आधारित है, अतः अलग-अलग जाति की स्त्री पर अंकुश के प्रकार भी अलग-अलग होते हैं।

समाज भी स्त्री को विशेष प्रकार के ही काम करने का मौका देता है और एक समान काम के लिए भी स्त्री को कम वेतन मिलता है। स्त्री घर का काम न करें तो कोई भी समाज नहीं चल सकता। फिर भी देश की राष्ट्रीय आय में स्त्री के काम की गिनती नहीं होती।

रेशमाः यदि स्त्रियां घर का काम करने की हड़ताल कर दें तो?

नीरुः तभी शायद समाज को स्त्री के काम की कीमत समझ आये!

एकताः स्त्री की प्रजनन शक्ति पर अंकुश अलग-अलग तरीके से रखा जाता है। जैसे मातृत्व, मां के प्रेम के खूब गुण गाये जाते हैं, लेकिन कोई स्त्री कुंवारी मां बन जाती है अथवा बारंबार वह बेटियों की मां बनती है तो उसे दुत्कारा जाता है। बच्चे को जन्म देने व पालन करने की जिम्मेदारी मां की होती है। पर बच्चे के साथ मां का नहीं, पिता का नाम लिखा जाता है।

आशाः और बच्चे पर उसी का अधिकार रहता है।

एकताः जिस देश में आबादी कम होती है, वहां स्त्री पर ज्यादा से ज्यादा बच्चे पैदा करने के लिए दबाव डाला जाता है और भारत जैसे देश में कम बच्चे पैदा करने के लिए दबाव डाला जाता है।

फरजानाः और बच्चे पैदा न हों, इसकी जिम्मेदारी भी औरत की ही रहती है। वह कॉपरटी इस्तेमाल करे या गोली खाये या ऑपरेशन कराये ये सब औरत ही करे, आदमी तो आजाद का आजाद!

कमला: आप सरकार और पुरुषों की बात कर रही हो? लेकिन आजकल तो धर्म बचाने के नाम पर संस्थाएं भी ज्यादा बच्चे पैदा करने की सलाह देने लगी हैं। कुछ दिन पहले हमारे मोहल्ले में एक धार्मिक संस्था के कार्यक्रम में एक वक्ता जोर-जोर से कह रहा था कि यदि हमारी औरतें ज्यादा बच्चों को जन्म नहीं देंगी तो हिन्दुस्तान में हमारे धर्म के लोग अल्पसंख्यक हो जाएंगे।

शकरी: ये लोग क्या औरतों को बच्चे पैदा करने वाली मशीन समझते हैं?

एकता: ऐसा दुष्प्रचार करने वाले एक ओर तो दो धर्मों के बीच भेद उत्पन्न करते हैं और दूसरी तरफ अपने धर्म की प्रजनन शक्ति पर अपना अंकुश रखना चाहते हैं।

रेशमा: और लैंगिकता पर अंकुश किस तरह रखा जाता है?

एकता: लैंगिकता पर अंकुश अर्थात् अपने ही शरीर पर स्त्री का कोई अधिकार नहीं। पुरुष जो चाहे करे, स्त्री को तो मर्यादा में ही रहना होगा।

नीरु: सीधे-सादे शब्दों में कहें तो 'स्त्री अर्थात् माटी की कुलड़ी और पुरुष अर्थात् पीतल का लोटा'।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्रियों पर अंकुशों के प्रकार

उत्पादकता यानि श्रमशक्ति पर अंकुश

- घर के काम का कोई मूल्य नहीं
- वेतन के लिए नौकरी करने या न करने के निर्णय पर पुरुषों का अंकुश
- वेतन के लिए कौन सा काम करना, किस समय काम करना, कब छोड़ना आदि पर अंकुश
- स्त्री के काम के लिए उसे कितना वेतन मिले इस पर अंकुश
- स्त्री को अपना वेतन खर्च करने पर अंकुश

प्रजनन शक्ति पर अंकुश

- बच्चे को जन्म देना है या नहीं इस पर अंकुश
- गर्भ-निरोधक का उपयोग करें कि नहीं
- किस प्रकार के गर्भनिरोधक का उपयोग करें, कब गर्भवती हों
- कितने बच्चों को जन्म देना और किस लिंग के बच्चे को जन्म देना
- बच्चों पर किसका अधिकार हो व बच्चे किसके नाम से पहचाने जायें

कमलाः हां, राह चलते पुरुष जो चाहे बोले या छेड़खानी करे और शिकायत करने पर स्त्री को कहा जाता है कि तुम्हारा ही कोई दोष होगा।

रेशमाः और फिर ऐसा भी कहते हैं "तुम आजकल की लड़कियां बहुत फैशन करती हो, इसीसे ऐसा होता है।"

आशाः तुम राह चलते की क्या बात कर रही हो, हमारा अपना ही आदमी हमारी इच्छा-अनिच्छा देखे बिना ही..., अस्वस्थ हैं या थके हुए हैं, तब भी... मानो विवाह क्या किया हम इनके गुलाम हो गए!

शकरीः और स्त्री अगर अकेली हो तो एक पुरुष की नहीं, पूरे समाज के पुरुषों की गुलामी झेलनी पड़ती है। मजदूरी करती हैं, तो सेठ और मुकादम ही नहीं, दूसरे पुरुष मजदूर भी बुरी नजर रखते हैं। अगर मुकादम से शिकायत करें तो कहता है, 'इज्जत' की इतनी ज्यादा परवाह है तो घर में बैठी रहो ना!

एकताः यह भी ब्राह्मणवादी पितृसत्ता की मानसिकता है कि तथाकथित 'अच्छे घर' की स्त्री अपनी पवित्रता सुरक्षित रखने के लिए घर में ही रहे और मजदूर वर्ग की स्त्री के साथ कुछ भी हो जाए तो कोई बड़ा गुनाह नहीं है।

लैंगिकता पर अंकुश

- स्त्री और पुरुष के लिए लैंगिकता के दोहरे मापदंड है
- शील-पवित्रता मात्र स्त्री के लिए है
- स्त्री के शरीर को शर्मजनक वस्तु के रूप में माना जाता है
- स्त्री को किसके साथ कितना हँसना-बोलना है, किसके साथ कितना संबंध रखना है, इस पर अंकुश
- उसे विवाह करना है या नहीं, कब करना है, किसके साथ करना है, इस पर अंकुश
- विवाह के बाद यौन संबंधों में पुरुष की इच्छा का प्रभुत्व

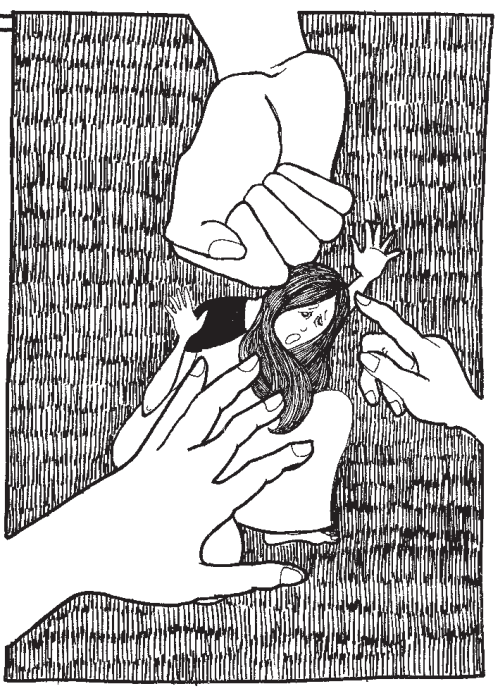

रेशमाः हां जैसे इस गाने में बताया गया है - घर में ही कैद रखा, घरेलू नाम दिया, निकले जब बाहर तो हर पल बदनाम किया।

सारी सहेलियाँ साथ हम मिलेंगी

सारी सहेलियाँ साथ हम मिलेंगी-२
और गलियों में जाकर ये सुनाएंगी-२
कितने जमानों से हम पीर सहते आए हैं-२-हेहेss होहोss, हेहेss होहोss
अब तो ना और हम सहेंगीं सहेली री-२
कुल की मर्यादा और घर के जंजाल में-२
रीति-रिवाज और धर्मों के जाल में-२-हेहेss होहोss, हेहेss होहोss

जी लिया बहुत मोह छोड़ेंगीं सहेली री-२
सारी सहेलियाँ साथ हम मिलेंगी
और गलियों में जाकर ये सुनाएंगी-२

घर में बिठा लिया और घरघूरनी नाम दिया-२
निकले जो बाहर तो पग-पग बदनाम किया-२-हेहेss होहोss, हेहेss होहोss
ऐसे अपमान ना सहेंगीं सहेली री-२
सारी सहेलियाँ साथ हम मिलेंगी
और गलियों में जाकर ये सुनाएंगी

अपने दुःख तो हमें आप ही भगाने हैं-२
लड़ना है, जीतना है, आँसू ना बहाने हैं-२-हेहेss होहोss, हेहेss होहोss
बन के चट्टान हम रहेंगी सहेली री-२
सारी सहेलियाँ साथ हम मिलेंगी
और गलियों में जाकर ये सुनाएंगी

जागे हैं, जागेंगे औरों को जगाएंगे-२
आज ही से हक सारे अपने हम पाएंगे-२-हेहेss होहोss, हेहेss होहोss
नदिया बन मुक्त बहती जाएंगीं सहेली री-२

- डॉ. सरुप ध्रुव

(मूल गुजराती का हिन्दी रूपान्तर)

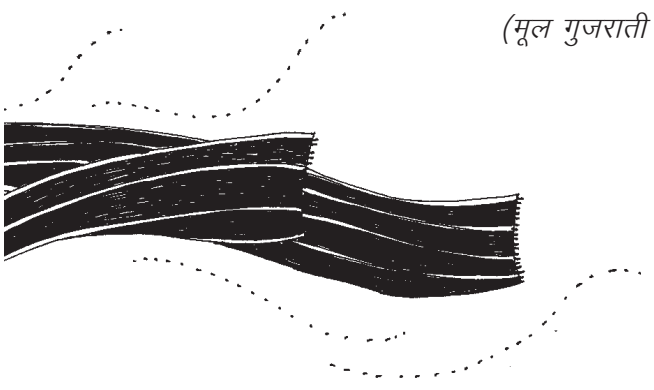

एकता: जैसी मनु स्मृति में थी, वैसी ही ३००० वर्ष पुरानी मानसकिता के कुछ अंश आज भी हमे अपने समाज में देखने को मिलते हैं।

आशा: लेकिन क्या ऐसी अन्यायी ब्राह्मणवादी व्यवस्था के विरुद्ध समाज में विरोध नहीं हुआ?

एकता: हुआ था, बौद्ध और जैन धर्म ब्राह्मणवादी वर्चस्व के विरोध स्वरूप ही शुरू हुए थे। इसके बारे में हम अगली बार चर्चा करेंगे।

ब्राह्मणवादी वर्चस्व के सामने बौद्ध और भक्ति आंदोलन

एकता: जैसे-जैसे ब्राह्मण वर्ण का वर्चस्व समाज में बढ़ता गया, वैसे-वैसे उनके द्वारा धर्म के नाम पर कर्मकांडों और रीति-रिवाजों का उपयोग कर अन्य वर्णों का शोषण भी बढ़ने लगा। शास्त्र, संस्कृत में लिखे हुए थे और शास्त्र पढ़ने का अधिकार सिर्फ ब्राह्मणों को ही था। अतः ब्राह्मण मानो, ईश्वर और सामान्य लोगों के बीच ठेकेदार बन गये थे। ब्राह्मण की मर्जी के बगैर कोई भी धार्मिक विधि नहीं हो सकती थी। सामान्य लोगों को धर्म और शास्त्र के द्वारा, पूर्व-जन्म तथा पुनर्जन्म का डर दिखा कर ब्राह्मण अपनी मनमानी करते। इस शोषण और दमन के विरुद्ध चुनौती के रूप में बौद्ध और जैन धर्मों का उदय हुआ। इन नये धर्मों ने ब्राह्मणों के वर्चस्व, उनके कर्मकांडों का विरोध किया और संस्कृत के बदले लोगों की बोलचाल की भाषा में धर्म का उपदेश देना शुरू किया। बहुत से क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों ने इस नये धर्म को अपनाया।

रेशमा: तो क्या इस नये धर्म में औरतों को कुछ अधिक अधिकार मिले?

एकता: बहन! समाज में जब-जब भी कोई बड़ी उथल-पुथल होती है तब समाज की आधी आबादी यानी स्त्रियां उसमें शामिल होती ही हैं। समाज के परिवर्तन के साथ-साथ स्त्रियां अपनी बात करें, यह भी स्वाभाविक ही है। इसी भांति ब्राह्मणवाद के विरुद्ध बगावत में भी स्त्रियां शामिल हुई थीं। यद्यपि बौद्ध धर्म में भिक्षुणी के रूप में प्रवेश पाने के लिए भी स्त्रियों को संघर्ष करना पड़ा था। पर आखिरकार, गौतम बुद्ध की पालक माता गौतमी और उसके बाद वैशाली की विख्यात नर्तकी आम्रपाली बुद्ध की प्रथम शिष्या बनीं। हालांकि उन्हें प्रवेश इस शर्त पर मिला था की भिक्षुणी का स्थान हमेशा भिक्षु से नीचा ही रहेगा। इस तरह पुरुष भिक्षु और स्त्री भिक्षुणी के अधिकार

समान नहीं थे, लेकिन पहली बार स्त्रियों को भी संसार त्याग कर 'मोक्ष' के लिए संघ से जुड़ने की छूट मिली। इससे अनेक स्त्रियों के लिए पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था के विरुद्ध बगावत करने का एक रास्ता भी खुल गया।

कमला: लेकिन हमें स्कूल में, इतिहास में बौद्ध धर्म के बारे में जो बताया जाता है, उसमें तो जाति प्रथा के विरोध या पुरुष-प्रधान समाज के विरुद्ध बगावत के बारे में कुछ भी नहीं बताया गया।

एकता: बौद्ध काल में बौद्ध भिक्षुणियों द्वारा लिखे गए पद 'थेरी गाथा' नामक ग्रंथ में संकलित किये गये हैं। उनमें पुरुष-प्रधान समाज के विरुद्ध विद्रोह के उदाहरण भी देखने को मिलते हैं।

आशा: थेरी गाथा?

एकता: थेरी अर्थात् बड़ी-बुजुर्ग। बुजुर्ग भिक्षुणियों द्वारा लिखा हुआ ग्रंथ है थेरी गाथा।

सुमंगलमाता नामक बौद्ध भिक्षुणी द्वारा पाली में लिखे एक पद का भाव यों है:

"एक औरत आज़ाद हुई। कितनी आज़ाद हूँ मैं,
अब, चौके में हमेशा घिसते रहने से मुक्त,
भूख की जकड़न से मुक्त,
खाली खनकते बर्तनों से मुक्त,
उस आदमी की क्रूरता से मुक्त,
वो, जो छाते बुनता है।
अब शांत और धैर्यवान हूँ मैं,
सारे काम और द्वेष से मुक्त।
फैलते वृक्षों की छाया में जाती हूँ मैं
और अपनी खुशी पर ध्यान टिकाती हूँ।"

इसी तरह मट्टा नामक भिक्षुणी ने लिखा है:

"कितनी आज़ाद हूँ मैं! कितनी अनोखी है आज़ादी!
तीन तुच्छ वस्तुओं से मुक्त-
मुक्त ओखली, मूसल और अपने टेढ़े मालिक से,
पुनर्जन्म और मृत्यु से मुक्त हूँ मैं, जिस तमाम ने दबाए रखा था मुझे
वो सब अब दूर फिंक चुका है।"

नीरुः अरे, इन भिक्षुणियों के पदों में तो मोक्ष और ध्यान के साथ-साथ चूल्हे-चौके और संसार के जंजाल से मुक्त होने की भी बात है।

फरजानाः आज से हजारों साल पहले भी औरतें ऐसा सोच सकीं थी, इसकी तो मुझे कल्पना तक नहीं थी।

कमलाः भारत की अपेक्षा आज श्रीलंका, थाईलैंड, बर्मा जैसे देशों में बौद्ध धर्म के बहुत अनुयायी हैं। इससे लगता है कि बौद्ध धर्म भारत में जन्मा, पर इसका प्रचार-प्रसार भारत में कम हुआ होगा।

एकताः जब बौद्ध धर्म शुरू हुआ, तब भारत में इसका बहुत प्रसार हुआ था। सम्राट अशोक जैसे प्रभावशाली राजा ने भी आखिरकार इसे स्वीकार किया था। लेकिन उस समय बौद्ध धर्म और स्थापित हिन्दू धर्म के ब्राह्मणवादी ठेकेदारों के बीच जबर्दस्त युद्ध हुए थे। साथ ही जैसे-जैसे सामान्य लोगों में से यह राजा महाराजाओं का धर्म बनता गया, वैसे-वैसे इसके लक्षण बदलने लगे। कोई राजा एक धर्म का समर्थन करता तो दूसरा राजा दूसरे धर्म का। एक-दूसरे के मंदिरों-मठों पर कब्जा जमाने, मठ तोड़कर मंदिर बनाने और मंदिर लूटकर मठ स्थापित करने के उदाहरण भी इतिहास में देखने को मिलते हैं। आखिरकार बौद्ध धर्म का मूल विद्रोही स्वरूप कमजोर पड़ जाने के बाद उसे हिन्दू धर्म में समाहित कर लिया गया, मानो वह हिन्दू धर्म का ही कोई सम्प्रदाय हो।

नीरुः सचमुच आज बहुत कुछ जानने को मिला।

रेशमाः हां, हमें जो इतिहास पढ़ाया जाता है, उसमें तो ये तमाम बातें बताई ही नहीं गईं। लेकिन यह तो आपने हिन्दू धर्म की बात की, पर क्या दूसरे धर्मों में पितृसत्ता के विरोध में कोई आंदोलन नहीं हुआ?

आशाः नहीं हुआ होगा, तभी तो इस्लाम धर्म में आज भी स्त्रियों पर बहुत से बंधन हैं।

फरजानाः ऐसा नहीं है। इस्लाम में औरतों को बहुत हक दिये गये हैं पर समाज उसे छीन लेता है।

नीरुः पर चार पत्नी का रिवाज तो इस्लाम धर्म में है ही?

एकताः इस्लाम में जो लिखा गया है उसे हमें उस समय के संदर्भ में देखना चाहिए। जब पुरुष अमर्यादित संख्या में शादी कर लेते थे, तब उस जमाने में यह एक सुधार था। एक तरह से देखा जाये तो हिन्दू धर्म

में कितनी पत्नी हो सकती है उसकी कोई सीमा नहीं है। अगर हम पिछली पीढ़ी में झांके तो हमें एक से ज्यादा पत्नी के उदाहरण देखने को मिलेंगे। आजादी के बाद ही कानून बना कि एक पत्नी के रहते हुए पुरुष दूसरी शादी नहीं कर सकता। लेकिन आज भी ऐसे कई उदाहरण देखने को मिलते हैं।

आशा: तो फिर उस समय मुसलमानों के लिए ऐसा कानून क्यों नहीं बनाया गया?

एकता: भारत में अलग-अलग धर्म के लोगों के लिए अलग-अलग पारिवारिक कानून लागू होते हैं। इसकी बात हम विस्तार से आगे कभी करेंगे। लेकिन फिलहाल हम यह समझेंगे कि इस्लाम का उदय किन परिस्थितियों में हुआ, उसके पहले स्त्रियों की स्थिति कैसी थी और इस्लाम के आगमन में स्त्रियों की क्या भूमिका रही। क्या आपको पता है कि इस्लाम का जन्म किन परिस्थितियों में हुआ?

रेशमा: हां, मैं बताऊँ - इस्लाम की शुरुआत हज़रत मोहम्मद पैगम्बर ने की थी। उनका जन्म ई.पू. ५७० में अरबस्तान के मक्का शहर में हुआ था। उस समय अरबस्तान में अनेक कबीले हुआ करते थे, जिनमें आपस में लगातार लड़ाई-झगड़े चलते रहते थे। मक्का में उनके अनेक देव और देवी की मूर्तियाँ थी, जिनकी वो पूजा करते थे। लोगों को अंधविश्वास से उबारने के लिए अल्लाह ने हज़रत मोहम्मद को पैगम्बर बनाया और मक्का के पास एक गुफा में अपना संदेश दिया।

फरजाना: अल्लाह के द्वारा समय-समय पर उन्हें दिये गये संदेश कुरान में लिखे गये हैं। यह इस्लाम का पवित्र ग्रंथ है।

एकता: क्या आपको पता है हज़रत मोहम्मद को पैगम्बर के रूप में स्वीकार करके सबसे पहला मुसलमान कौन बना?

कमला: ना, आप ही बताइये।

एकता: हज़रत मोहम्मद पैगम्बर की पत्नी बीबी खदीज़ा। बीबी खदीज़ा का जीवन तथा उनके पैगम्बर के साथ संबंध की बात बहुत ही प्रेरणादायी है।

शकरी: हमें भी उनके बारे में बताइए ना।

एकता: खदीज़ा एक बखूबी व्यापारी थी। मध्य-पूर्व के देशों में उनके काफिले व्यापार करते थे। उनकी बहुत इज्जत थी। वे एक विधवा थी और अनेक जाने-माने लोग उनके साथ विवाह करने को तत्पर थे, परंतु खदीज़ा ने किसी के साथ शादी करना स्वीकार नहीं किया। हज़रत मोहम्मद उनसे उम्र में १५ साल छोटे थे। बीबी खदीज़ा ने उन पर विश्वास करके अपना व्यापार उनको सौंपा। धीरे-धीरे वे हज़रत मोहम्मद के गुणों से परिचित होती गई और उनके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा।

नीरु: क्या? महिला होकर सामने से विवाह का प्रस्ताव रखा? और पैगम्बर अपने से उम्र में बड़ी, ज्यादा पैसे वाली व विधवा स्त्री के साथ शादी करने के लिए सहमत हो गये?

एकता: हां, उनका विवाह बहुत सादगी से हुआ। जीवन के हर मोड़ पर उन्होंने पैगम्बर का साथ दिया। जब हज़रत मोहम्मद को मक्का के पास की गुफा में अल्लाह का संदेश पहली बार मिला, तो अल्लाह ने उन्हें पैगम्बर के रूप में पसंद किया है, ऐसा विश्वास बीबी खदीज़ा ने ही उन्हें दिलाया था। पैगम्बर ने जब इस्लाम का प्रचार-प्रसार करना शुरू किया तब मक्का के तत्कालीन सत्ताधारियों ने उन्हें परेशान करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। ऐसे समय में हमेशा बीबी खदीज़ा ने उनका पूरा साथ निभाया और इस्लाम के प्रचार के लिए अपनी संपत्ति भी दी थी। उनकी संपत्ति का उपयोग पैगम्बर ने गुलामों को मुक्त कराने तथा गरीबों और जरूरतमंदों की मदद करने के लिए खर्च किया। उनकी मृत्यु के बाद, पैगम्बर ने जिनके साथ दुबारा निकाह किया, उस बीबी आयशा की भूमिका भी उतनी ही सशक्त थी। आयशा उनके करीबी साथी अबू बकर की बेटी थी और उनसे उम्र में काफी छोटी थी। उसकी याददाश्त् बहुत अच्छी थी। पैगम्बर के विधानों, इस्लाम की परंपरा और इतिहास के माने गये विद्वानों में उनकी गिनती होती है। कुरान और हदीस की आयतों को लिखने में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। इस तरह इस्लामिक कानून बनाने में तथा उसका ज्ञान फैलाने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। पैगम्बर के साथियों को जब उनके

विधानों को समझने में मुश्किल होती तो वे आयशा से पूछते थे। वह बहुत अच्छी वक्ता थी और उन्होंने एक योद्धा की भूमिका भी निभाई।

कमलाः हमें तो यह मालूम ही नहीं था कि इस्लाम की शुरुआत में स्त्रियों का इतना महत्त्व था। अब हमें यह बताओ कि पहले की अपेक्षा इस्लाम के आने के बाद स्त्रियों की स्थिति कैसे ज्यादा अच्छी थी।

एकताः इस्लाम के आगमन के पहले अरबस्तान में अलग-अलग कबीलों में आपस में लगातार लड़ाई-झगड़े चलते रहते थे। स्त्री का स्थान मिल्कियत के समान ही था। भारत में जैसे कुछ जातियों में नवजात बालिका की हत्या की जाती थी, उसी तरह वहां भी बेटियों को जिन्दा दफनाया जाता था। परंतु पैगम्बर ने कहा कि जो बेटियों को जिन्दा नहीं दफनाएगा, उनका तिरस्कार नहीं करेगा और बेटियों से ज्यादा बेटों को महत्त्व नहीं देगा उसे खुदा स्वर्ग भेजेंगे।

उसी तरह एक दूसरा रिवाज था कि पुरुष की मृत्यु के बाद उसकी तमाम संपत्ति की तरह उसकी पत्नी को भी उसके उत्तराधिकारी की मिल्कियत मानी जाती थी। इस रिवाज को इस्लाम ने नकारा और निकाह की हिमायत की जिसमें महिला से उसकी पसंद पूछी जाती है और वह जितना मेहर बताये उतना उसके पति को देना पड़ता है।

आशाः हां, हमने देखा है कि निकाह के समय लड़की से पूछा जाता है कि 'कबूल है.....' और जब लड़की हां बोले तभी निकाह मंजूर किया जाता है।

नीरुः यह मेहर का मतलब क्या है?

फरजानाः मेहर लड़की का हक होता है और वह जो मांगे वह उसके पति को देना पड़ता है। इसमें स्त्री शौहर की हैसियत के मुताबिक आजीवन भरण-पोषण के लिए भी रकम मांग सकती है। लेकिन आजकल तो मेहर इतना कम हो गया है कि चार दिन का गुजारा होना भी मुश्किल है।

एकताः इस्लाम के शुरुआती दौर में स्त्रियों को बुर्के में रहना आवश्यक नहीं था और न ही मस्जिद में जाने की मनाही थी। बीबी खदीज़ा और आयशा के जीवन-दर्शन से हम कह सकते हैं कि स्त्रियों का संपत्ति

में, राजनीति में, धार्मिक मामलों और कानून बनाने में भी महत्त्वपूर्ण स्थान था।

कमला: सही में, यह सब जानने के बाद ऐसा लगता है कि इस्लाम उस समय का क्रांतिकारी धर्म था। परंतु आज क्यों मुसलमान स्त्रियों की स्थिति अलग ही दिखाई देती है?

एकता: हां, बौद्ध धर्म की तरह इस्लाम धर्म की सुधार की धार भी आगे चलकर कमज़ोर हो गई। शुरू के वर्षों में खुद पैगम्बर और उनके वारिसों ने बहुत सादगीपूर्ण जीवन बिताया जिनको खलीफा के रूप में जाना जाता था। परंतु जैसे-जैसे इस्लाम का फैलाव बढ़ता गया वैसे-वैसे उनके खलीफा सुख-सुविधाओं के चंगुल में फंसते चले गये। ऐसा भी एक समय आया कि गुलामी की प्रथा तथा स्त्रियों की गुलामी को भी धर्म के नाम पर जायज़ मानने की दलीलें देने लगे। आज दुनिया के अलग-अलग देशों में मुसलमान रहते हैं और ये सभी देश के रीति-रिवाज व कानून भी अलग-अलग हैं। काफी इस्लामिक देशों के कानूनों में महिलाओं के पक्ष में सुधार हुए हैं। भारत में ऐसी परिस्थिति क्यों है इसकी बात तब विस्तृत रूप से करेंगे जब हम पारिवारिक कानून की चर्चा करेंगे।

कमला: ठीक है, लेकिन हिन्दू धर्म के ब्राह्मणवाद के विरुद्ध बौद्ध धर्म के बाद कोई और विद्रोह नहीं हुआ?

एकता: फिर से एक अलग तरह का विद्रोह मध्य युग में भक्ति आंदोलन के रूप में देखने को मिलता है। जिस तरह बौद्ध भिक्षुणियां समाज के स्थापित धर्म के विरुद्ध विद्रोह के कारण बंधनों से बाहर निकल सकी थीं ठीक उसी तरह भक्ति आंदोलन में भी भारत के अलग-अलग भागों में अनेक भक्त स्त्रियां बाहर आईं।

आशा: हां, भक्त कवि मीराबाई के बारे में हम जानती हैं। मीरा ने पति का घर छोड़ा, महल छोड़ा और गलियों में साधु संतों तथा गरीब भक्तों के साथ घूमने में ही सुख का अनुभव किया।

फरजाना: हमें भक्ति आंदोलन के बारे में भी बताइये ।

एकता: भक्ति आंदोलन की शुरुआत ८वीं सदी में दक्षिण भारत से हुई उसके बाद कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, पंजाब, काश्मीर, बंगाल, असम आदि में एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप में

भक्तों, संतों, सूफी संतों और उन्हें मानने वाले अनुयायियों का फैलाव देखने को मिलता है। स्थापित हिंदू धर्म के व्याप्त उच्च जाति के ब्राह्मणवादी वर्चस्व के सामने भक्ति आंदोलन में संतों और अनुयायियों के रूप में धोबी, चमार, जुलाहे, कुम्हार, लुहार, सुनार, किसान आदि जातियों के स्त्री पुरुष बड़ी संख्या में जुड़ गए।

कमला: भक्ति आंदोलन इसी अवधि में ही क्यों विकसित हुआ?

एकता: कई लोगों का कहना है कि यह भारत में फैल रहे मुस्लिम धर्म के विरुद्ध प्रतिक्रिया थी।

नीरु: हमने सुना है कि मुसलमानों ने हिन्दुओं के कई मंदिर तोड़े और जबरदस्ती लोगों को मुसलमान बनाया।

एकता: आपने जो बाते सुनी हैं वे अधूरी हैं। कई मुसलमान राजाओं ने तो मंदिर लूटे पर साथ-साथ हिन्दू राजाओं ने भी लूटे।

शकरी: हिन्दू राजा मंदिर क्यों लूटेगें?

एकता: क्योंकि वे राजा थे। आज इस बात को हिन्दू-मुसलमान के नज़रिये से देखा जाता है। पर हकीकत में हम मध्य युग के इतिहास को देखें तो हमे पता चलेगा की हरेक राजा का मुख्य ध्येय अपनी राज्य की सीमा को बढ़ाना था और इसके लिए वे दूसरे राजाओं के राज्य में आक्रमण व लूटपाट करते थे और मंदिरों को भी लूटते थे क्योंकि मध्य युग में मंदिरों में ढेर सारी धन संपत्ति रहती थी।

आशा: यकीन नहीं होता है... किसी ऐसे राजा का उदाहरण तो दीजिए।

एकता: उदाहरण के लिए टीपू सुलतान के राज्य में श्री रंगपट्टनम मंदिर को मराठों ने तोड़ा था और टीपू सुलतान ने उसे दुबारा बनाया। राजतरंगिनी नाम की पुस्तक से हमें यह जानकारी मिलती है कि ११वीं सदी में काश्मीर के राजा हर्ष के राज्य में मंदिरों को तोड़ने के लिए खास अधिकारी नियुक्त थे। उसी तरह मुसलमान राजाओं ने मस्जिदों को भी तोड़ा था। जब महमूद गजनी ने सोमनाथ पर हमला किया था तब रास्ते में उसे महमूद, फतह, दाउद नाम के राजा के साथ युद्ध करना पड़ा और उसकी सीमा में स्थित मस्जिद को भी तोड़ा था।

कमलाः हां, अकबर जैसे बहुत से मुसलमान राजाओं ने दोनों धर्म के लोगों को अपने दरबार में ऊंचे पद दिये और उनकी रानी जोधाबाई को शादी के बाद हिन्दू धर्म का पालन करने की सुविधा दी गई थी। लेकिन औरंगजेब जैसे कुछ राजाओं के कारण सारे मुसलमान राजाओं को बदनाम किया जाता है।

एकताः हालांकि औरंगजेब व्यक्तिगत रूप से पक्का मुसलमान था परंतु दस्तावेजों से पता चलता है कि वे हिन्दू मंदिरों के रख-रखाव हेतु खर्च देते थे। उनकी सेना में अनेक हिन्दू सरदार थे तथा शिवाजी की सेना में अनेक मुसलमान सरदार थे। शिवाजी के तोपखाने के प्रमुख इब्राहिम गार्दी थे और उनके एक मंत्री मौलाना हैदरअली थे।

आशाः परंतु यह तो सच है कि मुसलमानों के आक्रमण के कारण इस दौरान महिलाओं को पर्दे में रखने की प्रथा व जौहर की प्रथा शुरू हुई। हमने ऐसा पढ़ा है कि अलाउद्दीन खिलजी के जुल्म से बचने के लिए रानी पदमिनी को जौहर करना पड़ा था।

एकताः मध्य युग में राजाओं व सामंतों के लगातार युद्ध के कारण स्त्रियों पर अंकुश बढ़े थे। यह बात सच है लेकिन इसे हिन्दू-मुसलमान की दृष्टि से देखने का नज़रिया गलत है। जिस तरह से हमने रानी पद्मिनी के बारे में पढ़ा उसी तरह से रानी कर्णावती तथा हुमायूं की बात भी उतनी ही मशहूर है।

रेशमाः यह सही है। जब चितौड़ पर गुजरात के सुलतान ने हमला किया तब उनसे बचने के लिए चितौड़ की रानी कर्णावती ने हुमायूं को राखी भेजकर अपने राज्य की रक्षा करने की विनती की। उस समय हुमायूं दूसरे स्थल पर युद्ध लड़ रहा था। लेकिन कर्णावती को बहन मानते हुए उन्होंने चितौड़ की रक्षा के लिए सेना भेजी थी।

एकताः इस तरह मध्य युग में आपको हरेक धर्म के अच्छे और बुरे राजाओं के उदाहरण देखने को मिलेंगे और भारत में इस्लाम का फैलाव सिर्फ तलवार के बलबूते पर नहीं हुआ। अनेक उच्च अधिकारियों व मंत्रियों ने मुसलमान राजाओं को खुश करने के लिए स्वेच्छा से इस्लाम धर्म अपनाया था। इस्लाम धर्म में जाति

प्रथा के ऊंच-नीच के भेदभाव नहीं थे। इसलिए कई बार धर्म परिवर्तन इसी कारण हुए थे क्योंकि उसमें समाई हुई समानता हिन्दू समाज के तथाकथित निचले वर्ग के लोगों को भी छू गई थी।

फरजाना: भक्ति युग की बातें करते-करते हम कहां पहुंच गये।

एकता: हां, लेकिन यह बातें भी जरूरी थीं क्योंकि स्त्रियों और सामान्य लोगों की एकता को तोड़ने के लिए इतिहास के नाम पर आज-कल अनेक बातें की जाती हैं, इसीलिए इसको समझना जरूरी है।

तो मैं कह रही थी कि इस आंदोलन की वजह से निचली जाति के लोगों को भी अपना सामाजिक स्थान मिला और उनका धर्मान्तरण नहीं हुआ। दूसरी एक बात भी सामने आई है और वह अधिक महत्त्वपूर्ण है। इस अवधि के दौरान भारत में व्यापार-उद्योग बढ़ा और नये कला-कौशलों का विकास हुआ, इस कारण शूद्र समझी जाने वाली कारीगर जाति का जीवन स्तर ऊंचा उठा। आर्थिक स्तर सुधरने के साथ उनमें अपने सामाजिक स्थान को सुधारने की उत्कंठा जागी जो स्थापित परंपरा में संभव नहीं था। भक्तों, संतों द्वारा स्थापित पंथों, संप्रदायों द्वारा निम्न जातियों की यह सामाजिक अस्मिता संबंधी जरूरत पूरी हुई।

फरजाना: सही है। कबीर इसी समय के एक संत थे। वे न हिंदू थे, न मुसलमान। दोनों धर्म के लोग उनके भक्त थे। कबीर का एक बहुत प्रचलित दोहा है-

जाति ना पूछो साधु की पूछो साधु का ज्ञान
मोल करो तलवार की पड़ी रहन दो म्यान

कमला: और एक दोहा जो मुझे पसंद है-

कहे कबीर चेतहु बंधु
बोलन हारा तुर्क न हिंदू

एकता: ये संत स्त्री-पुरुष अलग-अलग स्थानों में घूम-घूम कर भजनों, गीतों, कथाओं द्वारा साधारण लोगों के बीच ईश्वर को ले गए। उनका ईश्वर ब्राह्मणों के ईश्वर जैसा नहीं था, जो बहुत ऊंचा हो और जिन्हें छुआ भी न जा सके। उन्होंने प्रियतम के रूप में ईश्वर

की भक्ति की। उनके भजनों में मानवता, एकता की बातें और दंभी ब्राह्मणवाद तथा कट्टर जाति प्रथा के विरुद्ध विचार देखने में आते हैं। भक्तों के भजन व गीत संबंधित गांव या प्रदेश की लोक बोली में थे और इन्होंने धर्म पर संस्कृत भाषा के दबदबे को तोड़ा। इस प्रकार जो धर्म राज दरबार या विशाल मंदिरों की दीवारों में मुट्ठी भर ब्राह्मणों या विद्वानों के हाथों में कैद था, वहां से निकल कर खुले, मुक्त आकाश के तले, गलियों में, खेतों में, गांव के चौपाल में और साधारण स्त्रियों के आंगन में घूमता-फिरता नजर आने लगा।

नीरुः आप स्त्री भक्तों की बात बताने वाली थीं न, वह क्या थी?

आशाः एकता बहन यह बात तो आप अगली बार ही बताना, आज तो काफी देर हो गई है।

स्त्री भक्तों के व्यक्तिगत संघर्ष की सीमाएं

एकता: भक्ति आंदोलन में अनेक स्त्री-भक्त भारत के हर कोने में देखने को मिलती हैं। इन स्त्री संतों के भजनों में, पुरुष-प्रधान समाज में एक स्त्री होने के नाते उनके अनुभवों की बातें भी सुनने को मिलती हैं। जैसे काश्मीर की संत लालदेद के भजनों में घर के रोजमर्रा के कामों के जंजाल और सास के तानों की बातें हैं, तो महाराष्ट्र की बहीना बाई विवाह की बेड़ी की बात करती हैं। गुजरात की गंगा सती ने कहा कि मेरू पर्वत डिग जाए तब भी भक्त अपनी भक्ति में मग्न रहते हैं, तो रत्नाबाई ने अपने चर्खे से लगाव की बात कहते हुए लिखा है कि जब पति छोड़कर परदेस चला गया, माता-पिता, सास-ससुर ने छोड़ दिया, तब भी वह चर्खे से रुई कात कर किसी तरह जीवन निर्वाह कर रही हैं।

रेशमा: मैंने तो यही सोचा था कि चर्खे की बात गांधीजी के समय में ही शुरू हुई थी।

कमला: नहीं, गांधीजी को भी चर्खे की प्रेरणा गांव की उन श्रमजीवी स्त्रियों से मिली जो चर्खे से अपना जीवन निर्वाह करती थी, पर आप आगे बताओ न!

एकता: कर्नाटक की अक्का महादेवी और राजस्थान की मीराबाई ने जिस तरह अपने घर, परिवार, पति को छोड़कर भक्तिमय जीवन जीया था, उसकी बात तो अनोखी ही है।

अक्का महादेवी कर्नाटक के शिमोगा के पास उदुताड़ी गांव की थीं। वहां का राजा उनके साथ विवाह करना चाहता था, पर अक्का की इच्छा नहीं थी। अपने पदों में उन्होंने लिखा है कि कोई इन्सान उसका प्रेमी होगा तो वह उसके शरीर को अपनी इच्छापूर्ति का साधन बना देगा। जबकि वे स्वयं अपने मन से चेन्नामल्लिकार्जुन से विवाह कर चुकी हैं, क्योंकि चेन्नामल्लिकार्जुन के साथ संबंध से वे अपने शरीर को नहीं, वरन् शरीर में विद्यमान व्यक्तित्व को साकार करेंगी।

आशाः चेन्नामल्लिकार्जुन कौन थे?

एकताः जिस प्रकार मीरा कृष्ण को गिरधर नागर के नाम से पुकारती थीं, उसी प्रकार अक्का अपने प्रियतम ईश्वर को चेन्नामल्लिकार्जुन के नाम से पुकारती थीं।

ऐसा कहा जाता है कि वे शरीर को जरा भी महत्त्व नहीं देती थीं, अतः अपने ईश्वरीय प्रियतम चेन्नामलिक्कार्जुन की तलाश में कर्नाटक के एक सिरे से दूसरे सिरे तक निर्वस्त्र हालत में घूमती-फिरती थीं। पुरुष उनकी इस भावना को समझ नहीं पाते थे। उनके पदों में पुरुषों की कुदृष्टि और छेड़छाड़ के अनुभवों की बातें आती हैं। उनकी गहन परीक्षा के बाद आखिरकार कर्नाटक में समकालीन वीर शैव पंथ के विख्यात संतों अल्लामां और बसावा ने उन्हें संत के रूप में स्वीकार किया।

मीरा १५वीं सदी में मेवाड़ के राठौड़ राजपूत परिवार में जन्मी थीं। परिवार वैष्णव होने के कारण वे बचपन से ही कृष्णभक्ति में लीन हो गई थीं। उनका विवाह मेवाड़ के सिसोदिया राजपूत राजा के परिवार में हुआ। राजपूत कुल की मर्यादाओं और राजमहल के वैभव की बजाय उन्हें अपनी कृष्णभक्ति में अधिक श्रद्धा थी। उन्होंने अपने पति को बता दिया था कि वह मन से कृष्ण को अपना पति मान चुकी हैं, अतः उनके साथ पत्नी जैसे संबंध नहीं रख सकतीं। इस तरह राजसी पति को इनकार करना उनका प्रथम विरोध था। थोड़े समय बाद उनके पति का देहांत हो गया। अब विधवा मीरा को अपने पति के भाई के साथ संघर्ष करना पड़ा। एक राजपूत राजा की विधवा के नाते मर्यादा का पालन करने के बदले मीरा तो अन्य भक्तों के साथ भक्ति में मग्न थीं। कुल और कुटुम्ब की मर्यादा के विपरीत आचरण के लिए उनके ससुराल वालों द्वारा उनके प्राण लेने के अनेक प्रयत्न किये जाने की बातें भजनों व जनश्रुतियों में सुनने को मिलती हैं।

मीरा के जीवन और मृत्यु के बारे में अनेक चमत्कारों से भरपूर कथाएं हैं। उनमें से कितनी सच्ची हैं और कितनी मात्र कहानी हैं, यह कहना कठिन है। लेकिन हमारे लिए महत्त्वपूर्ण हकीकत यह है कि मीरा राणा का महल छोड़कर साधु-संतों के साथ गलियों में, रास्तों पर, जंगलों से होकर कृष्ण के भजन गाती वृंदावन के लिए निकल पड़ीं। वहां से वापिस राजस्थान और गुजरात के अलग-अलग भागों से होती हुई द्वारका गईं और वहीं उनके जीवन का अंत हुआ। उन्होंने ब्रज भाषा, हिंदी और गुजराती में पद लिखे हैं। चमार जाति के संत रोहीदास को उन्होंने अपना गुरु माना था। इस प्रकार उन्होंने, विवाह, तथाकथित उच्च जाति, राजपूत कुल, राज वर्ग जैसे तरह-तरह के बंधन तोड़े।

भारत के अन्य भागों में संत के रूप में उन्होंने स्थान प्राप्त किया, परंतु उनके इस विरोध के कारण राजस्थान की उच्च जातियों में कोई भी अपनी बेटी का नाम मीरा नहीं रखता। उनका नाम इतिहास से मिटाने के प्रयत्नों के समक्ष निम्न माने जाने वाले, शूद्र जातियों के कारीगरों और किसानों ने मीरा के भजनों के द्वारा उनकी बात और उनके विरोध को जीवित रखा।

तेरो कोई न रोकण हार

तेरो कोई न रोकण हार,
मगन होय मीरा चली,
लाज सरम कुल की मर्यादा,
सिर सों दूर करीं,
मान अपमान होउ घर पटके,
निकसी हूं ग्यान गली,
मगन होय मीरा चली।

तेरो....
ऊँची अटरिया लाज किवड़िया,
निरगुन सेज बिछी पचरंगी झालर
शुभ सोहे, फूलन फूल कली,
मगन होय मीरा चली।

तेरो...
सेज सुख मणा मीरा सोवे,
शुभ है आज धरी,
तुम जाओ राणा घर अपणे,
मेरी तेरी न सरी,
मगन होय मीरा चली।

अब न रहूंगी तोरे हठ की

राणा जी....हे राणा जी,
राणा जी अब न रहूंगी तोरे हठ की
साधु संग मोहे प्यारा लागे,
लाज गई घूंघट की,
हार सिंगार सभी ल्यो अपना
चूड़ी कर की पटकी
राणा जी...
महल किला राणा मोहे न भाए
सारी रेसम पट की,
राणा जी...
हुई दीवानी मीरा डोले
केस लटा सब छिटकी
राणा जी...

कमलाः पांच हजार वर्षों से इतनी सारी स्त्रियों ने अन्याय का विरोध किया है। उनकी कहानियों से कितना कुछ सीखने को मिलता है।

नीरुः पर ये तमाम स्त्रियां तो महान थीं, कोई देवी थी तो कोई रानी थी। क्या हमारे जैसी आम स्त्रियां उनके जैसा काम कर सकती हैं?

एकताः हमने कुछ जानी-मानी प्रसिद्ध स्त्रियों को लेकर ही थोड़ी चर्चा की है, लेकिन प्राचीन काल से आज तक हर युग में कितनी सारी साधारण स्त्रियों ने समाज के प्रचलित नियमों को चुनौती दी होगी, उनमें से कइयों के बारे में हम जानते तक नहीं क्योंकि इतिहास में उनके बारे में कुछ भी लिखा नहीं गया।

रेशमाः अरे, इन जानी-मानी स्त्रियों के विषय में भी हमें कहां सच्ची जानकारी दी जाती है। इतिहास में तो उनको सिर्फ देवी या महान स्त्री ही बना दिया गया है। अन्याय के विरुद्ध उन्होंने जो आवाज उठाई उसकी तो बात ही इतिहास में नहीं पढ़ाई जाती।

आशाः लेकिन इतने वर्षों से स्त्रियों ने विरोध किया है, फिर भी सीता के जमाने में जो अन्याय होते थे, वे आज भी हो रहे हैं, ऐसा क्यों?

एकताः यह बहुत महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि गार्गी, द्रौपदी, बौद्ध भिक्षुणियों, मीरा या अन्य भक्त स्त्रियों के विरोध हमारे संघर्ष के इतिहास में महत्त्वपूर्ण विरासत के रूप में हैं, जिनसे हमें प्रेरणा मिलती है। इन सभी स्त्रियों ने अपनी निजी जिंदगी में पितृसत्ता और जातिप्रथा के अनेक बंधनों-परंपराओं को तोड़ा और उनके लिए अपने प्राण तक संकट में डाले। इससे यह असर हुआ कि उन्हें अपने ढंग से बंधनमुक्त जीवन जीने में कुछ हद तक सफलता मिली। अपने-अपने समय में समाज में उन्होंने खलबली पैदा की। आगे चल के पितृसत्ता और जातिप्रथा के खिलाफ उनकी चुनौती को भुलाकर, उन्हें इतिहास में सिर्फ एक भक्त के रूप में शामिल कर लिया गया और धर्म की मुख्यधारा के एक भाग के रूप में उन्हें समाहित कर लिया गया। इससे उनके तत्कालीन क्रांतिकारी कदमों का प्रभाव मिट गया। उनके जीवन से लोगों को प्रेरणा तो प्राप्त हुई, लेकिन उनके प्रयत्न सम्पूर्ण समाज में परिवर्तन लाने में सक्षम नहीं रहे क्योंकि उनका विद्रोह सामूहिक नहीं था। इस वजह से समाज के पितृसत्तात्मक-पुरुषप्रधान ढांचे पर स्थायी प्रभाव नहीं पड़ सका।

फरजानाः लेकिन इन महिलाओं ने सामूहिक संघर्ष क्यों नहीं किया?

शकरीः उन्होंने हमारी तरह मंडल बनाकर संघर्ष किया होता तो समाज कितना बदल चुका होता!

एकताः ये स्त्रियां सामूहिक संघर्ष नहीं कर सकीं क्योंकि उस समय सामान्य लोगों और स्त्रियों की सामूहिक राजनीति की कल्पना कर पाना भी कठिन था।

आशाः क्या मतलब?

एकताः मतलब कि उस समय राजनीति सिर्फ राजा, महाराजा, उमरावों, सामंतों, धर्म-गुरुओं और ब्राह्मणों तक ही सीमित थी। समाज के तमाम निर्णय लेने का अधिकार इन उच्च वर्गों के पास ही था। कानून भी वही बनाते थे और न्याय भी वही करते थे। सर्व-साधारण जनता की, मेहनत-मजदूरी से उत्पादन करने वाले वर्ग की, समाज के निर्णय लेने में कोई भागीदारी नहीं थी। ऐसी परिस्थिति थी कि राजा जो कह देता वही कानून था और धर्मगुरु या ब्राह्मण जो कह देते वही धर्म।

रेशमाः आज भी बड़े लोग जैसा कहते हैं, वैसा ही होता है। सरकार, कानून और पुलिस भी उनकी ही है। फिर भी हम, सामान्य नागरिक उनके खिलाफ आवाज तो उठाते ही हैं ना!

एकताः लेकिन उस समय सामान्य लोग नागरिक नहीं थे, बल्कि राजा, ठाकुर या सामंत की प्रजा थे। नागरिक को समाज या सरकार के निर्णयों में भागीदारी निभाने का हक है, लेकिन उस समय राजा की आज्ञा पालन करना प्रजा का कर्तव्य था। राजा की आज्ञा प्रजा न मानें तो राजा उनकी हत्या भी करवा सकता था। इसके लिए राजा को केस चलाने की जरूरत नहीं पड़ती थी।

कमलाः लेकिन मेरी दादी तो कहती थीं कि उनके जमाने के राजा बहुत अच्छे थे और अपनी प्रजा का बहुत ध्यान रखते थे।

एकताः तुम्हारी दादी मां का कहना सही है। कई अच्छे राजा बहुत परोपकारी थे। साधारण जनता की जरूरतों का ध्यान रखते थे, उनकी सुख-सुविधा के काम करते थे, लेकिन ऐसे काम करने की राजा की कोई जिम्मेदारी नहीं थी। अगर राजा प्रजा का ध्यान नहीं रखता या उन पर जुल्म ढाता, तब भी प्रजा उनको बदल नहीं सकती थी।

नीरु: तब फिर स्त्रियों के सामूहिक संघर्ष की शुरुआत कब और कैसे हुई?

एकता: इसकी शुरुआत सामंतशाही और राजाशाही के विरुद्ध पूंजीवाद के उदय और मताधिकार की लड़ाई के साथ हुई।

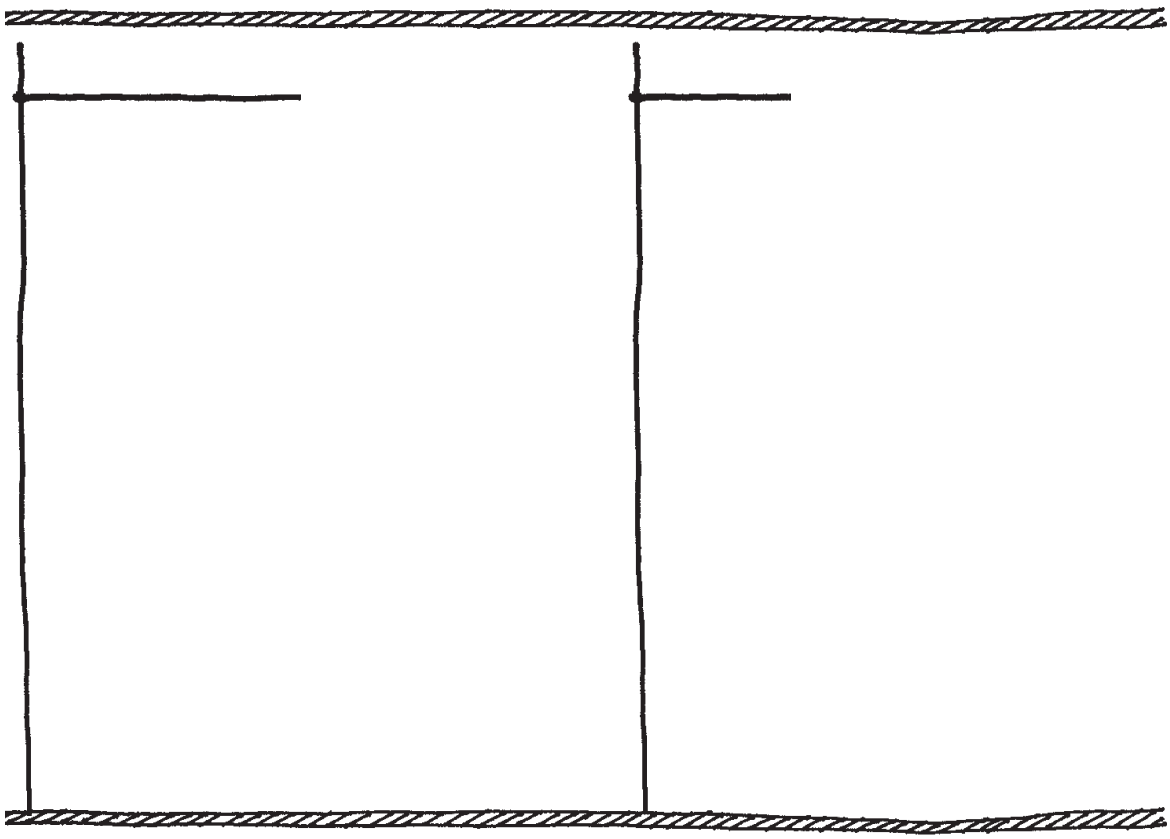

आशा: मत देने का अधिकार? वो क्या इतना महत्त्वपूर्ण है?

एकता: आज हम मत देने के अधिकार के इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि इसका महत्त्व शायद ही समझ सकते हैं, परंतु मत देने का अधिकार हासिल करने के लिए समाज के मेहनतकश वर्ग, गरीब वर्ग और स्त्रियों को सदियों तक लड़ना पड़ा था। इनमें से भी स्त्रियों को तो सबसे ज्यादा लंबे और कठिन संघर्ष के बाद ही मतदान का अधिकार मिला।

फरजाना: चुनाव आयोग और सारे राजनीतिक दल प्रचार करते हैं कि 'मतदान आपका अधिकार और कर्तव्य भी है' तब भी आज कितनी बहनें वोट देने जाती हैं?

कमलाः यह तो गलत है। वोट देने तो जाना ही चाहिए। मतदान का अधिकार यानि देश कैसे चलेगा, यह परोक्ष रूप से तय करने का अधिकार। इस तरह अपने जीवन से संबंधित निर्णय लेने में हम अपनी भागीदारी निभा सकते हैं। लोकतंत्र मे यह भागीदारी दर्ज कराने का हक प्रत्येक व्यक्ति को है।

एकताः वोट देने का अधिकार का मतलब हमें यह तय करने का अधिकार है कि सरकार कौन चलायेगा। जो लोग सरकार में बैठें हैं, उनको देश के कानून बनाने और रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यापार, उद्योग आदि तमाम महत्त्वपूर्ण मामलों में नीति बनाने का अधिकार है। इन पर कितना खर्च किया जाये, वह धन कहां से प्राप्त करें, इसके लिए जनता से कितना कर लिया जाए, यह सब तय करने का भी अधिकार इन्हें है। इन सब फैसलों का हमारे जीवन पर बहुत असर पड़ता है। निर्वाचित जन प्रतिनिधियों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह इन निर्णयों को लेते समय जनता की भलाई को ध्यान में रखें। प्रत्येक वयस्क को, भले ही वह किसी भी धर्म, वर्ग, जाति का हो, उसकी कोई भी पहचान हो, उसे देश की सरकार तय करने का एक समान अधिकार है, क्योंकि वह देश का नागरिक है। इस तरह महत्त्वपूर्ण बात नागरिक के रूप में हमारे अधिकार की है।

रेशमाः हमने पढ़ा है कि प्राचीन भारत में और ग्रीस में भी गणराज्य थे और उनमें नागरिक निर्णय लेते थे।

एकताः बिल्कुल, उस समय नागरिकों को मत देने का अधिकार था, लेकिन उस समय नागरिक की व्याख्या ही बहुत सीमित थी। उस समय सम्पत्तिशाली पुरुष ही नागरिक गिने जाते थे। स्त्रियों और नागरिकों के काम करने वाले गुलामों को नागरिक नहीं माना जाता था, अतः वे मतदान भी नहीं कर सकते थे।

नीरुः तो फिर सामान्य लोग प्रजा से नागरिक कैसे बने?

एकताः विश्व में सामंतशाही और राजाशाही के खिलाफ विकसित हो रहे पूंजीवाद के संघर्ष के साथ-साथ मताधिकार और नागरिकता के हकों के लिए संघर्ष शुरू हो गया और भारत में १८वीं सदी के दौरान हुए सामाजिक सुधार के आंदोलनों और अंग्रेजों की सत्ता के खिलाफ हुए राष्ट्रवादी आंदोलन के दौरान जन सामान्य के नागरिक अधिकारों के संघर्ष की शुरुआत हुई।

कमलाः उस दौरान किस प्रकार के संघर्ष हुए और उसमें औरतों का क्या योगदान रहा?

एकताः पहले हम भारत के बारे में जानेंगे या विश्व की बात करेंगे?

फरजानाः हम क्यों पूरी दुनिया की चिंता करें? हमें अपने देश के बारे में ही बताइए।

नीरुः सही बात है। इन परदेसी लोगों और उनके शहरों के नाम भी इतने मुश्किल होते हैं कि बोलते-बोलते जुबान अटक जाती है।

एकताः आपकी मुश्किलें मैं समझ सकती हूँ लेकिन देश और दुनिया के महिला आंदोलनों के बीच में गहरा रिश्ता है। विश्व में जो भी हुआ उसका गहरा असर हमारे देश की औरतों पर भी पड़ा है।

रेश्माः एकता बहन, हमारे देश के सामाजिक सुधार के और आजादी के आंदोलनों के बारे में तो हम थोड़ा बहुत जानते हैं। हमें पहले विश्व की महिलाओं के संघर्ष के बारे में बताइए।

आशाः सही है। हम सिर्फ अपने देश की ही नहीं, परदेस की बहनों से भी प्रेरणा लेंगे।

एकताः और मताधिकार के लिए संघर्ष की पहली शुरुआत भी दुनिया के अन्य देशों में हुई थी, इसलिये हम पहले उसके बारे में जानेंगे। लेकिन आज तो बहुत देर हो चुकी है, हम एक गाने से मीटिंग समाप्त करेंगे।

कमलाः तो आज हम देश-विदेश के बंधनों को तोड़ के नया जमाना लाने के लिए जूझती बहनों का गाना गायेंगे।

तोड़-तोड़ के बंधनों को

(पंजाबी लोक गीत 'कुट कुट बाजरा' की धुन पर आधारित)

तोड़-तोड़ के बंधनों को देखो बहनें आती हैं
ओ देखो लोगों देखो बहनें आती हैं
आयेंगी, जुल्म मिटायेंगी, वो तो नया ज़माना लायेंगी
तारीकी को तोड़ेंगी वो ख़ामोशी को तोड़ेंगी
हाँ, मेरी बहनें अब ख़ामोशी को तोड़ेंगी।
मोहताजी और डर को वो मिलकर पीछे छोड़ेंगी
हां मेरी बहनें अब डर को पीछे छोड़ेंगी
निडर, आज़ाद हो जायेंगी,
अब वो सिसक सिसक के न रोयेंगी
तोड़-तोड़ के बन्धनों को...

मिल कर लड़ती जायेंगी वो आगे बढ़ती जायेंगी
हां मेरी बहनें अब आगे बढ़ती जायेंगी
नाचेंगी और गायेंगी वो फ़नकारी दिखायेंगी
हां मेरी बहनें अब मिलकर खुशी मनायेंगी
गया ज़माना पिटने का
जी अब गया ज़माना मिटने का
तोड़-तोड़ के बन्धनों को...

बहने पढ़ने जायेंगी और अपना ज्ञान बढ़ाएंगी
हां मेरी बहनें अब अपना मान बढ़ाएंगी
नये ज्ञान की रोशनी वो घर-घर तक पहुंचाएंगी
हां मेरी बहनें अब हर घर को महकाएंगी
दीप जलेंगे समता के जी अब गीत चलेंगे समता के
तोड़-तोड़ के बन्धनों को देखो बहनें आती हैं...

- कमला भसीन

- स्त्री सुबह से शाम तक घर में बेगार करती है, पर घर के काम की कोई कीमत नहीं होती। अतः परिवार या समाज में घर का काम करने वाली स्त्री का कोई मान-सम्मान नहीं होता।
- स्त्री को बाहर काम करना चाहिए या नहीं, कमाना है या नहीं, यह निर्णय स्वयं स्त्री नहीं ले सकती, उस पर परिवार के पुरुषों का, बड़े-बुजुर्गों का अंकुश रहता है। अलग-अलग जाति की महिलाओं पर यह अंकुश अलग-अलग ढंग से काम करता है। परंपरागत रीति से तथाकथित ऊंची जातियों में स्त्री को कमाने के लिए काम करने की छूट नहीं रहती, और तथाकथित निम्न जातियों में स्त्री को काम करना ही पड़ता है।
- इसके अतिरिक्त पारिवारिक जरूरतों को पूरा करने के लिए जब किसी भी जाति की स्त्री को कमाने की जरूरत पड़ती है तो उसे उसका पारिवारिक दायित्व समझा जाता है।
- परंतु उसको कैसे काम करना है, कहां करना है और वह कहां नहीं जा सकती तथा कब काम छोड़ना है, ये सब निर्णय भी पुरुषों के हाथ में होते हैं। यह सब उनकी सुविधाओं व जरूरतों को ध्यान में रख कर लिये जाते हैं। जैसे पति की आमदनी बढ़े या उसका तबादला हो जाए तो स्त्री काम छोड़ दे। स्त्री का तबादला या अधिक जिम्मेदारी वाली जगह पर प्रमोशन हो तो उसे स्वीकार नहीं करने दिया जाये या फिर बच्चें हों या बच्चों के विकास के लिये जरूरी लगे, तो स्त्री को काम छुड़वा दिया जाये।
- उसके वेतन पर उसका अपना अधिकार नहीं रहता। अपना वेतन खर्च करने का निर्णय लेने के लिए स्त्री स्वतंत्र नहीं है।

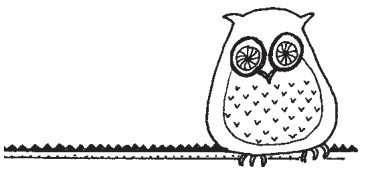

- खास तरह के काम या नौकरी में महिला उम्मीदवारों को लेना ही नहीं। शिक्षिका, रिसेप्शनिस्ट, सेक्रेटरी, मॉडल, परिचारिका जैसे खास प्रकार के कामों में अधिकांश महिलाओं को लिया जाए जिससे स्त्रियां जो काम घर में करती हैं उसी प्रकार के काम कमाने के लिए भी करें।
- वह कैसा काम कर सकती है और उसे कैसा काम मिले, इसमें स्त्री की योग्यता और उसका ज्ञान हीं नहीं देखा जाता वरन् परिवार के अलावा जाति और धर्म पर भी उसे निर्भर रहता है।
- एक जैसे काम के लिए स्त्री को पुरुष से कम वेतन और जिन कामों में कम वेतन या कम आय हो, ऐसे असंगठित क्षेत्रों में स्त्रियों को अधिकाधिक लिया जाता है।

परिवार और अर्थतंत्र के उपरांत राज्य द्वारा भी इस परिस्थिति को मान्यता दी जाती है। स्त्रियां घर का काम न करें, तो कोई भी समाज चल ही नहीं सकता, इसके बावजूद स्त्री के काम की राष्ट्रीय आय में गणना नहीं होती। सरकार के विकास कार्यक्रमों में भी स्त्री को देश के एक उत्पादक सदस्य के बतौर नहीं, परंतु आश्रित व्यक्ति और निर्बल समूह के रूप में देखा जाता है।

इस प्रकार श्रम शक्ति पर अंकुश के परिणामस्वरूप अधिकांश महिलाओं के पास अपना स्वामित्व और स्वयं के नियंत्रण वाली कोई सम्पत्ति नहीं होती। वह पुरुष के सहारे जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाती है। घर गृहिणी का कहा जाता है, लेकिन घर पर उसका अधिकार नहीं होता। जब भी मतभेद होता है तब पति फौरन कह देता है कि 'निकल जाओ मेरे घर से।' स्त्री को 'रसोई की रानी' कहा जाता है, लेकिन रसोई के बर्तनों तक पर घर के पुरुषों का नाम लिखा जाता है।

- स्त्री और पुरुष के लिए लैंगिकता के दोहरे मापदंड हैं। 'इज्जत, शील, पवित्रता' आदि बनाये रखने के नाम पर स्त्री की स्वतंत्रता को लेकर तरह-तरह के अंकुश लगाये जाते हैं, और 'पवित्रता' बनाये रखने का बोझा सिर्फ स्त्री पर लादा जाता है। देसी भाषा में कहें तो 'स्त्री अर्थात् माटी की कुलड़ी और पुरुष अर्थात पीतल का लोटा।'
- स्त्री के शरीर को शर्मजनक वस्तु और पुरुष की सम्पत्ति मानकर उसे हमेशा ढंककर रखना अथवा उसे वस्तु या उपयोग का साधन मानते हुए उसका प्रदर्शन करके नफा कमाना।
- स्त्री को किसके साथ कितना हंसना-बोलना, किसके साथ कितना संबंध रखना, कैसे कपड़े पहनना, इस पर अंकुश। उसके घूमने-फिरने या बाहर निकलने पर अंकुश। कहां जाना, कहां नहीं जाना, रात में या खास समय पर बाहर न निकलने देना आदि के नियम।
- उसे विवाह करना है या नहीं करना, किसके साथ करना, इस पर अंकुश और विवाह के बाद यौन संबंधों में पुरुष की इच्छा का सम्पूर्ण प्रभुत्व। उसमें स्त्री की मर्जी-नामर्जी का कोई सवाल ही नहीं। पुरुष अपनी पत्नी की इच्छा के विरुद्ध उस पर जोर-जबरदस्ती करे तो उसे कानून भी बलात्कार नहीं मानता।
- स्त्री से छेड़छाड़, बलात्कार किया जाए, तब बलात्कार करने वाले को नहीं, उसकी शिकार बनी स्त्री के साथ में अपराधी जैसा व्यवहार किया जाता है।
- अगर किसी परिवार, समुदाय या देश के पुरुषों को शर्मनाक स्थिति में डालना हो, तो उनमें परिवार समुदाय या देश की महिलाओं पर बलात्कार किया जाता है।

प्रजनन शक्ति पर अंकुश निम्न रूप से दिखाई देते हैं:

- मातृत्व के, मां के प्रेम के खूब गुण गाये जाएं, पर कोई स्त्री कुंवारी माता बने अथवा बार-बार पुत्रियों की मां बने तो उसे तिरस्कृत किया जाता है।
- बच्चे को जन्म देने, पालने की जिम्मेदारी मां की, परंतु बच्चे का कुदरती संरक्षक तो पिता ही माना जाएगा। बच्चे के पीछे माता का नहीं, पिता का नाम लिखा जाता है और उसी का अधिकार रहता है।
- बच्चे को जन्म देना या नहीं, गर्भ निरोधकों का उपयोग लेना या नहीं, कौनसे गर्भ-निरोधक काम में लेना, कब गर्भधारण करना, किस लिंग के बच्चे को जन्म देना आदि पर अंकुश।

परिवार के अंकुश के अलावा स्त्री की संतानोत्पत्ति पर जनसंख्या नीति द्वारा राज्य का भी अंकुश रहता है। जनसंख्या नीति में स्त्री की या परिवार की जरूरत को नहीं बल्कि राज्य की जरूरत को महत्त्व दिया जाता है।

- जिस देश में जनसंख्या कम हो, वहां स्त्री पर अधिक से अधिक बच्चों को जन्म देने का दबाव डाला जाता है और भारत जैसे देश में कम बच्चे पैदा करने के लिए दबाव डाला जाता है।
- अधिकांशतया ऐसे परिवार नियोजन के साधनों की खोज की जाती है जो महिलाओं के लिए ही हों।
- सरकार और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की सांठ-गांठ से गरीब महिलाओं पर तरह-तरह के हानिकारक गर्भ-निरोधकों का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार महिलाओं की श्रमशक्ति, लैंगिकता और संतानोत्पत्ति पर अंकुश के कारण परिवार व समाज में स्त्री का दर्जा नीचा रहता है। प्राकृतिक संसाधनों, मानव सृजित पूंजी या सम्पत्ति और स्वंय अपने शरीर या जिंदगी पर तथा अपने व्यक्ति या नागरिक के रूप में पहचान पर भी स्त्री का नियंत्रण नहीं रहता। इसीलिए स्त्री का वैवाहिक दर्जा दर्शाना जरूरी बन जाता है। उसका दर्जा उसके पुरुष के संबंध के आधार पर तय होता है। वह विवाहिता है या कुंवारी, 'सौभाग्यवती' है या विधवा, परिवार के साथ रहती है या अकेली आदि मुद्दे समाज में तो महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं, परंतु साथ ही साथ संविधान द्वारा निर्मित कानूनों में भी महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं। और उसके कानूनी अधिकार भी उसके पुरुष के साथ के संबंध के आधार पर तय होते हैं। कई कानूनों में स्त्री को नागरिक के बतौर नहीं, परंतु पत्नी के बतौर, अर्थात् पुरुष की सम्पत्ति के रूप में देखा जाता है।

कोई भी देख सकता है कि ये अंकुश अन्यायी हैं और कोई भी व्यक्ति इनका विरोध किये बिना इन्हें स्वीकार नहीं सकता। स्त्रियां भी समय-समय पर इनमें से बाहर निकलने का प्रयत्न करती हैं। परंतु उनको इन अंकुशों की लक्ष्मण रेखा में रखने के लिए उन पर हिंसा की जाती है। कुछ महिलाओं के साथ हिंसा का व्यवहार होता है जिससे सभी महिलाओं को संदेश मिल जाता है कि उन्हें पुरुष प्रधान समाज द्वारा खींची गई लक्ष्मण रेखा नहीं लांघनी है। इसके उपरांत इन्हें कायम रखने की विचारधारा के रूप में धर्म, रीति-रिवाज, रूढ़ियां और तरह-तरह के व्रत-उपवासों और कानूनों का भी उपयोग किया जाता है।

इस विचारधारा की शिकार कई स्त्रियां भी बनती हैं और पुरुष आधिपत्य की रक्षक के बतौर काम करती हैं। उदाहरण के लिए - परिवार के अंदर बहू पर हिंसा के लिए परिवार के पुरुषों के अलावा कई बार स्त्रियां भी शामिल हो जाती हैं। इस बात को बहुत से लोग यूं कहते हैं कि 'स्त्री ही स्त्री पर हिंसा

करती है' अथवा 'स्त्री ही स्त्री की दुश्मन है', पर हकीकत में यहां सास या ननद एक स्त्री के रूप में नहीं बल्कि परिवार के पुरुषों के साथ उनके संबंध के कारण हिंसा करती हैं। जो सास बहू पर हिंसा करती है वह जमाई पर नहीं कर सकती, क्योंकि वहां उसका स्थान पुत्री की माता का है। दहेज की मांग करने हेतु उस पर ताने मारने में सास या ननद अग्रिम भूमिका अदा करती हैं और दहेज में मिले कपड़ों-गहनों से सगे-संबंधियों में अपना ठसका बताती हैं पर गहनों, नगदी राशि या कीमती वस्तुओं पर उनका वास्तविक अधिकार नहीं होता। उसे बेचने या किस तरह काम में लिया जाए, इसका अंतिम निर्णय परिवार के पुरुषों का होता है। जिस तरह से परिवार के सभी महत्त्वपूर्ण निर्णय पुरुष लेते हैं या उनकी मर्जी से लिये जाते हैं उसी तरह सास या ननद, बहू के साथ जो व्यवहार करती हैं उनमें परिवार के प्रमुख पुरुषों की सहमति होती है या उनकी इच्छा इन औरतों के जरिये प्रकट की जाती है। रिवाज में बंधे होने के कारण कई बार ससुर पुत्रवधू से सीधी बात नहीं करते लेकिन अपनी इच्छा पत्नि या बेटी के जरिये पुत्रवधू तक पहुंचाते हैं। इसलिए बहू के साथ हो रहे बर्ताव का वे विरोध नहीं करते। उनकी चुप्पी उनकी शह होती है और कभी-कभी साथ भी देते हैं।

इस तरह यहां स्त्री की भूमिका कारखाने के सुपरवाईजर जैसी होती है। मजदूरों को धमकाने, अंकुश में रखने का काम सुपरवाईजर करता है और इसके लिए मालिक से शाबाशी, थोड़ी अधिक पगार और अधिकार हासिल करता है, पर नफा तो मालिक को ही मिलता है। सुपरवाईजर भी आखिरकार तो सामान्य मजदूर से थोड़ी अधिक सत्ता रखने वाला मजदूर ही है, फिर भी वह मजदूर रहते हुए मालिक का हित सहेजने का काम करता है। कुछ हद तक ऐसी ही भूमिका परिवार में सास-ननद निभाती हैं। बहू पर अंकुश रखने के बदले उन्हें परिवार में तात्कालिक थोड़ी अधिक सत्ता मिल जाती है, परंतु उससे तो अंततः पुरुष आधिपत्य वाली, पितृसत्तात्मक समाज-व्यवस्था का ढांचा ही अधिक मजबूत होता है और उसका असर सभी महिलाओं पर पड़ता है।

संदर्भ साहित्य की सूची

१. बेटा क्या है? बेटी क्या है? लेखिका कमला भसीन, प्रकाशकः जागोरी, नई दिल्ली।

२. पितृसत्ता क्या है? लेखिका कमला भसीन, प्रकाशकः जागोरी, नई दिल्ली।

३. अन्डरस्टेन्डिंग जेन्डर, कमला भसीन, विमेन अनलिमिटेड, नई दिल्ली।

४. भारतीय महिला आंदोलन : कल आज और कल, दीप्ति प्रिया महरोत्रा, प्रकाशकः संपूर्णा ट्रस्ट, नई दिल्ली।

५. जहां स्त्रियों की पूजा होती है वहां देवताओं का वास होता है - हिन्दू स्त्री की कपोल कल्पित पुरखिन, कुमकुम राय का लेख, साधना आर्य, निवेदिता मेनन, जीनी लोकनीता सम्पादित पुस्तक, नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे, प्रकाशकः दिल्ली विश्वविद्यालय।

७. हम सबला, विशेष अंक : औरतों की अभिव्यक्ति विद्रोही पड़ाव, अप्रैल-सितंबर २००७

८. विमेन इन अर्ली इन्डिया, उमा चक्रबर्ती।

९. भारतीय समाज मां स्त्री जीवन, नीरा देसाई, प्रकाशकः आर. आर. सेठनी कं.

१०. विमेन इन मुस्लिम हिस्ट्री फातिमा मर्नीसी, सीमोर्घ, विमेन्स रिसोर्स एन्ड पब्लिशिंग सेन्टर।

११. द राइट्स ऑफ विमेन इन इस्लाम, असगर अली इन्जिनियर, स्टर्लिंग पब्लिशर्स।

१२. विमेन राईटींग इन इन्डिया, सुज़ी थारु एन्ड के. ललिथा (एड) वोल्युम-१, सेक्शन ऑन एन्सीयन्ट एन्ड मेडीएवल पिरियड, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।

सहियर (स्त्री संगठन) १९८४ से स्वायत्त महिला संगठन के रूप में कार्यरत है। 'सहियर' का उद्देश्य ऐसे समाज़ की रचना करना है जिसमें किसी भी तरह के शोषण, दमन, अन्याय या अत्याचार के लिए स्थान न हो एवं जिसमें नारी को मनुष्य के रूप में सामाजिक दर्जा प्राप्त हो।''

"नारी मुक्ति के बिना मानव मुक्ति संभव नहीं है एवं मानव मुक्ति के बिना नारी मुक्ति असंभव है" की समझ के साथ यह महिलाओं के अधिकारों एवं मानव अधिकारों के संघर्ष को आगे ले जाने के लिए विभिन्न गतिविधियां करता है।

- नुक्कड़ नाटकों, जागृति गीतों एवं गरबा शिविरों, निबंध लेखन, सार्वजनिक प्रदर्शन आदि जैसे जागृति कार्यक्रमों के द्वारा समाज के बृहद समुदाय के महिलाओं के प्रति पुरुष प्रधान दृष्टिकोण को बदलने का प्रयत्न करता है एवं उस समझ को समाज तक ले जाने के लिए संशोधन, प्रकाशन, पुस्तकालय जैसी गतिविधियां करता है।
- महिलाओं पर होने वाली हिंसा एवं महिलाओं को प्रभावित करने वाले अन्य कानूनों में सुधार लाने के लिए तथा मौजूदा कानूनों को क्रियान्वित कराने का अभियान जारी है।
- संप्रदायवाद, जातिवाद एवं सीमांत समूहों के मानवाधिकार हनन की घटनाओं में मानवाधिकार संगठनों के साथ मिलकर कार्य करता है।
- परिवार, समाज एवं कार्य स्थल पर, हिंसा, अन्याय का सामना करने वाली महिलाओं के साथ खड़ा रहकर उनको परामर्श, कानूनी सलाह एवं संवेदनात्मक सहारा देता है।
- किशोरियों के व्यक्तित्व के विकास एवं प्रतिभा को निखारने में सहायक बनता है।
- झोंपड़वासी, श्रमजीवी एवं निम्न मध्यम वर्ग की महिलाओं का मंडल बनाकर बचत, जागृति एवं दैनिक समस्याओं को हल करने के लिए उनको संगठित करता है।
- संवेदनशील क्षेत्रों में सभी समुदायों की सक्रिय महिलाओं को न्याय, शांति एवं कौमी एकता के लिए नेता बनने के लिए प्रशिक्षण देता है।
- स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं, सरकारी अधिकारियों, पुलिस तंत्र, शिक्षकों, वकीलों, ट्रेड युनियन के कार्यकर्ताओं एवं अन्य लोक संगठनों के कार्यकर्ताओं को महिलाओं की समस्याओं से परिचित कराने एवं उनमें महिलाभिमुख संवेदनशीलता लाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करता है। अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में विशेषज्ञ (रिसोर्स पर्सन) के रूप में कार्य करता है।

उन्नति - विकास शिक्षण संगठन एक अलाभकारी व गैर-सरकारी संगठन है, जो सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, १८६० के अंतर्गत १९९० से पंजीकृत है। संगठन का उद्देश्य है सामाजिक समावेश व लोकतांत्रिक अभिशासन को प्रोत्साहित करना ताकि समाज के कमज़ोर वर्गों को सशक्त बनाया जाए जिससे वे विकास की मुख्य धारा व निर्णय प्रक्रियाओं में प्रभावी और निर्णयात्मक रूप से भागीदारी निभा सकें।

संगठन पश्चिमी भारत के नागरिक समूहों, स्वैच्छिक संस्थाओं, स्थानीय अभिशासन के जन प्रतिनिधियों और सरकार के साथ मिलकर मुद्दा आधारित व नीतिगत शैक्षणिक सहयोग प्रदान करने की दिशा में कार्यरत है। सहभागी शोध, लोकशिक्षण, पैरवी, क्षेत्र स्तरीय संघटन व बहुहिताधिकारियों के साथ क्रियान्वयन करना संगठन की मुख्य कार्य पद्धतियाँ हैं। नागरिकों के मूलभूत अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए हम स्थानीय स्तर से लेकर नीतिगत बदलाव हेतु वातावरण बनाने का प्रयास करते हैं जिसमें हमें कमज़ोर लोगों के संघर्ष से प्रेरणा व हमारे सहयोगियों से शक्ति मिलती है। वर्तमान में सभी गतिविधियाँ निम्नांकित कार्यक्रम केन्द्रों द्वारा आयोजित की जाती हैं:

१. सामाजिक समावेश व सशक्तिकरण
२. नागरिक नेतृत्व व अभिशासन
३. आपदा जोखिम घटाने के सामाजिक निर्धारक

क्षेत्रीय अनुभवों से प्राप्त सीख को समेकित कर उसे प्रकाशित किया जाता है तथा ज्ञान संसाधन केन्द्र के द्वारा विस्तृत रूप से उसका आदान-प्रदान किया जाता है। हमारा प्रयास है कि सामुदायिक नेतृत्व, खासकर दलितों व महिलाओं के लिए अकादमी बनाएं ताकि वे स्थानीय मुद्दों को प्रभावी रूप से उठा सकें।

नारी
आंदोलन
का इतिहास

भाग - १
स्त्री जीवन संघर्षः प्राचीन काल से भक्ति आंदोलन तक

भाग - २
स्त्री समानता और मताधिकारः विश्व में नारी आंदोलन

भाग - ३
सामाजिक सुधार तथा स्वतंत्रता आंदोलन में स्त्रियां

भाग - ४
नारी मुक्ति आंदोलनः समस्याएं और चुनौतियाँ

उन्नति

विकास शिक्षण संगठन
जी-१/२००, आज़ाद सोसायटी, आंबावाड़ी
अहमदाबाद-३८००१५
फोनः ०७९-२६७४६१४५, २६७३३२९६
ई-मेलः sie@unnati.org
वेबसाईटः www.unnati.org

sahiyar

सहियर (स्त्री संगठन)
जी-३, शिवांजली फ्लैट्स,
जाधव अमीश्रद्धा सोसायटी के पास
नवजीवन, आजवा रोड, वडोदरा-३९० ०१९
फोनः ०२६५-२५१३४८२
ई-मेलः sahiyar@gmail.com